द्वितीय अध्याय

"मृदुला गर्ग की कहानियों में वस्तु-तत्व"

प्रस्तावना

2.1 कहानियों में वस्तु-तत्व का महत्त्व

2.2 मृदुला गर्ग की कहानियों में वस्तु-तत्व

2.2.1 'ग्लेशियर से ' कहानी संग्रह

2.2.1.1 ग्लेशियर से

2.2.1.2 झूलती कुर्सी

2.2.1.3 टोपी

2.2.1.4 तुक

2.2.1.5 होना

2.2.1.6 उल्टी धारा

2.2.1.7 खरीदार

2.2.1.8 प्रतिध्वनि

2.2.1.9 संज्ञा

2.2.1.10 सार्त्र कहता है

2.2.1.11 अलग-अलग कमरें

2.2.1.12 खाली

2.2.1.13 अन्धकूप में चिराग

2.2.1.14 गूँगा कवि

2.2.1.15 अदृश्य

2.2.1.16 एक चीख का इंतजार

2.2.2 'शहर के नाम' कहानीसंग्रह

2.2.2.1 तीन किलो की छोरी

2.2.2.2 करार

2.2.2.3 अक्स

2.2.2.4 अनाड़ी

2.2.2.5 चकरघिन्नी

2.2.2.6 बाहरीजन

2.2.2.7 वह मैं ही थी

2.2.2.8 रेशम

2.2.2.9 संगत

2.2.2.10 विलोम

2.2.2.11 शहर के नाम

निष्कर्ष

संदर्भ सूची

प्रस्तावना :-

कहानी लोकप्रिय एवं महत्त्वपूर्ण साहित्य विधा है। उसमें लोक-कल्याण की भावना और लोकरंजन का समन्वय होता है। वह छोटे मुँह बडी बात कहनेवाली साहित्यिक विधा है। बीसवीं शताब्दी में कहानी की लोकप्रियता का कारण औद्योगीकरण एवं विज्ञान की प्रगती के कारण मनुष्य के सामने उपस्थित समयाभाव की समस्या है। उपन्यास, महाकाव्य एवं नाटक के लिए उसके पास समय नही है। कहानी पन्द्रह मिनिट से लेकर आधे घंटे के समय में समाप्त हो जाती है। इसकी लोकप्रियता का दूसरा कारण कहानी पढने या सुनने की मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। यह एक स्वाभाविक इच्छा है, जो हमनें प्रकृतिदत्त रूप में वर्तमान रहती है।

मृदुला गर्गने विपुल मात्रा में कहानी साहित्य लिखा है। मृदुला गर्ग की कहानियाँ छोटी-छोटी और बहुत ही मनोरंजक हैं।

2.1 कहानियों में वस्तु-तत्व का महत्त्व :-

कथावस्तु कहानी का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। कहानी की कथावस्तु लेखक के जीवनानुभव की उपज होती है। किसी भी कथानक का प्राणतत्व कथावस्तु होती है। बिना कथावस्तु से कहानी बिना हड्डियों के ढाँचे का मनुष्य जैसे लगती है। कहानी का मूलाधार कथावस्तु ही होती है। इस के अंतर्गत कहानी के अन्य सभी तत्व समाए हुए दीख पडते हैं। इस कारण इसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। कहानी के अन्य सभी तत्व इस एकमात्र तत्वपर निर्भर होते हैं। इस कारण कथावस्तु कहानी के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। कथानक का महत्त्व बताते हुए उपेंद्रनाथ अश्क लिखते हैं - "शरीर के लिए जिस प्रकार ढाँचे की आवश्यकता है, उसी प्रकार कहानी के लिए कथानक की। जबडे की हड्डियाँ न हों तो कितना भी माँस चेहरे को सुन्दर नहीं बना सकता।" [1]

कहानी की कथावस्तु संक्षिप्त होती है। आरंभ से लेकर अंत तक कहानी पाठक के हृदय में कौतूहल तथा उत्सुकता बनाए रखती है। मौलिकता कहानीकार की प्रतिभा शक्ति की परिचायक होती है। कथावस्तु में रोचकता और क्रमबद्धता होती है, जिससे कहानी प्रवाहशील बनी रहती है। इसके साथ ही कहानी में विश्वसनीयता और यथार्थपरकता भी होती है। "कथानक, विश्वसनीय, स्वाभाविक एवं जीवन के यथार्थ से संबंधित होना चाहिए। वह किसी सत्य के उद्‌घाटन में समर्थ होना चाहिए। उसमें संवेदना, संघर्ष, कौतूहल, औत्सुक्य और करूणा होनी चाहिए।" [2]

कहानी की कथावस्तु के बारे में कहा जाता है कि वह न तो छोटी हो या न अधिक बडी। कथा एक ही बैठक में पढी जा सके, इस कारण इसमें पात्रों की संख्या भी कम होती है। कथोपकथन या संवाद बहुत ही रोचक, संक्षिप्त होते हैं, जिनके माध्यम से कथानक जल्द-से-जल्द अपने उद्देश्य तक पहुँचता है।

डॉ.परमानंद श्रीवास्तव लिखते है: "कहानी के कथानक को रहस्यात्मक घटनाओं से भर देना, बडी

साधारण बात है, पर उसमें निहित रहस्य-संदर्भ को किसी नुकीले बिन्दु पर सजीव कर देना कहानी के विकसित शिल्प पर निभर है।" [3]

मोहनलाल जिज्ञासू मानव-जीवन को कथानक का आधार मानते हुए लिखते हैं, "जीवन की विविध समस्याएँ ही उसकी रचना की प्रधान सहायिका हैं और जीवन-व्यापारों के ही द्वारा उसका निर्माण होता रहता है। अतएव कथानक की सामग्री जीवन-व्यापारों से ही उपलब्ध होनी चाहिए, क्योंकी उसका संबंध मानव-जीवन की गहनतम विवेचना से है।"[4]

सैद्धांतिक स्वरूप के अनुसार कथावस्तु ही वह प्रारुप है, जो कहानी के निर्माण में आधारभूत रूप से कार्य करता है। आरंभ से ही कहानी पाठक को कहानी में आगे घटित होनेवाली घटनाओं का आभास मिलता है, जिससे उसके -मध्य का संबंध, आरंभ तथा अंत मे प्रस्तुत सूत्रों से होता है। अंत का संबंध, आरंभ और मध्य में आयोजित घटना-सूत्रों से ही होता है।

डॉ.प्रतापनारायण टंडन ने कहानी की कथावस्तु के बारे में लिखा है, "सामान्य साहित्य की भाँति ही कहानी की कथावस्तु का विषय क्षेत्र भी अत्यंत व्यापक है। कहानी का प्राणतत्व होने के कारण यह कथावस्तु मानव जीवन और मानव स्वभाव की भाँति ही प्रशस्त क्षेत्रवाली होती है। कहानी की कथावस्तु में निबद्ध घटनाएँ और कार्य व्यापार कहानी की गतिशीलता में वृद्धि करते हैं।"[5]

वास्तव में कथावस्तु कहानी का केंद्रीय आधार होता है। अन्य सभी तत्व कथावस्तु के सहायक और पूरक होते हैं। वे कथावस्तु में निबद्ध घटनाओं को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए विविध सूत्र जुटाते हैं और कहानी को स्वरुपगत परिपूर्णता प्रदान करते हैं।

डॉ.लक्ष्मीनारायण लाल कथानक के बारे में लिखते हैं - "कथानक अपनी क्रमबध्दता, एकसमता और वर्णनात्मकता से आगे बढकर मानसिक सूत्रों, मनोवैज्ञानिक चक्रों, सूक्ष्म घटनाओं, मनोद्वेगों के मध्य से निर्मित होकर स्फुट रेखाचित्रों, टुकडों और सांकेतिक रुपों में कभी-कभी इतने व्यापक हो गये हैं कि उनमें जीवन के लम्बे-लम्बे भाग विस्तृत समस्याएँ संगुम्फित हो गई है।"[6]

कहानी के आरंभ मे मूल प्रतिपाद्य, उसकी वास्तविक समस्या का संकेत और मुख्य पात्रों के परिचय किसी-न-किसी रूप में होते हैं। उसमें कहानी का उद्देश्य अवश्य सन्निहित होता है। कहानी के मध्य में समस्या का परम विस्तार तथा अंतर्द्वंद्व का आरोह-अवरोह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है। रचना विधान की दृष्टि से कथावस्तु का मध्यभाग ही कहानी का विकास-भाग है। इस भाग में कौतुहल को महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। कहानी के अंत मे कौतूहल और कहानी का संपूर्ण अभिप्राय स्पष्ट हो जाता है। यहाँ कहानी का कार्य पूर्ण हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कहानी के लिए कथावस्तु या वस्तु-तत्व महत्त्वपूर्ण होता है। उपयुक्त

विवेचन के आधार पर मृदुला गर्ग की कहानियों के वस्तु-तत्व की चर्चा आवश्यक है।

2.2 मृदुला गर्ग की कहानियों में वस्तु-तत्व :-

मृदुला गर्ग की कहानियों में वस्तु-तत्व को देखने के लिए उनके कहानी-संग्रहों को क्रमशः देखना और परखना आवश्यक है।

2.2.1 ग्लेशियर से :-

प्रस्तुत कहानीसंग्रह सन 1980 में प्रकाशित हुआ है। इस कहानीसंग्रह में 16 कहानियाँ संकलित हैं। इन कहानियों में व्यक्तिगत भावनाओं का चित्रण अधिक तथा पारिवारिक संवेदनाओं का कम अंकन हुआ है। संस्कारबद्ध, नैतिकता के घेरे से बाहर आने के बाद के संकट और उस संकट से जुडी यातनापूर्ण मनस्थितियों का विश्लेषण है। इन सभी कहानियों का क्रमशः हम विवेचन करेंगे।

2.2.1.1 ग्लेशियर से :-

ग्लेशियर से बर्फिले पहाडी प्रदेश की सैर के लिए निकली मिसेस दत्ता / उषा भटनागर के व्यक्तिगत भावनाओं का चित्रण है। मिसेस दत्ता अपने पति के साथ ग्लेशियर की सैर के लिए निकल पडती है। तीन बजे दोनों वहाँ के टूरिस्ट बंगले पर पहुँच जाते हैं। वहाँ से ग्लेशियर दो मील दूर है, इसलिए आज टूरिस्ट बंगले में विश्राम कर दूसरे दिन वह ग्लेशियर की सैर करने निकलना चाहते हैं। मिसेस दत्ता चाय पीकर आँखे मूंदे आराम कर रही थी, कि अचानक तेज हवा बहने लगती है, और उसकी आँखे खुल जाती है। उसके गले का दुपट्टा हवा के साथ बहने लगता है, और मिसेस दत्ता उसके पीछे-पीछे दौडती है।

फिर वह पुरानी यादों में खो जाती है। शादी से पहले मिसेस दत्ता का नाम उषा भटनागर था। श्यामला पुरी उषा की सहेली थी, जो बहुत ही आधुनिक और आजाद खयालों की लड़की थी। वह चाहती थी कि दोनों इसी तरह बिना शादी के आजाद जिंदगी जिए। इसलिए वह कहती थी, "हर महीने नया पहाड़, नया खेमा, पहले से लम्बी ऊन.... साल में एक बार ऊन काटेंगे और बेंच देंगे; अरे, मन हुआ तो भेड ही बेंच डालेंगे। फिर नयी जगह, नया खेमा, नया धंधा..... तू और मैं..... बस हम दो और पहाड़..... हर सुबह नया पड़ाव....." [7] लेकिन अचानक ही वह बी.ए. की पढाई छोडकर गायब हो जाती है और उषा शादी कर लेती है।

दस साल पुरानी यादों में मिसेस दत्ता ग्लेशियर की तरफ बढ़ती ही जाती है। पर्यटकों की भीड़ ग्लेशियर से लौट रही थी। तभी एक गाईड मिसेस दत्ता को अपने घोडे पर ग्लेशियर की सैर करने का आग्रह करता है। लेकिन मिसेस दत्ता फिर एक बार यादों में खो जाती है। गाईड की तरफ वह ध्यान नहीं देती। अपने आपसे बाते करती है। मिसेस दत्ता सिर पकडकर नदी के किनारे बैठ जाती है। उसे लगता है कि, नदी का पानी उसे चिढ़ा रहा है। तभी एक कड़कदार आवाज सुनाई देती है। कहीं कोई नहीं था। बस, सूरज सिर पर है और

14866

गर्म रोशनी सोच को पिघला रही थी। वह आवाज की तरफ चल देती है। दूर से उसे पहाड पर एक बर्फ का बुत दिखाई देता है, लेकिन वह एक पठान था।

पठान मिसेस दत्ता का हाथ पकडकर चार कदम लम्बी दौड पार कर लेता है। वह देखती है - "पठान छाती तक पानी में है। वह उसकी बाहों में है और ठहरी हुई हवा की जिंदगी की चाहत से जन्मी हँसी बहाये लिये जा रही है।" [8] वह उसे बर्फ सनी घास पर उतार देता है। सामने फिर पहाड़ था। पठान उसे लकड़ी के सपाट तख्ते पर बिठाकर और रस्सी से खींच कर ग्लेशियर की खडी-बर्फीली चढ़ाई पर उपर लिए जा रहा है। उसे देखकर मिसेस दत्ता के मन में शक निर्माण होता है, कि यह आदमी है या जुनून की जलती मशाल। "दमकते गुलाबी चेहरे पर तीखी नाक, काली दाढ़ी और वशीकरण मंत्र-सी मोहपाश में बांधती ये रंग-रंग का धोखा देती आँखें। उफ, इतना खूबसूरत भी कोई हो सकता है ..... इंसान ?" [9]

पठान का हाथ पकडकर वह उपर चढ़ जाती है, और उस के सहारे नीचे भी आ जाती है। सूरज डूब जाता है। उसकी आँखे मूँदने लगती हैं। तब उसे लगता है, कि यह इन्सान नहीं, बल्कि मौत का फरिश्ता है। उससे छुटकारा पाने के विचारों में ही वह बर्फपर गिर जाती है। जब वह होश में आती है, तब उसके सुन्न हाथ-पैरों को मला जा रहा है, और सामने मिस्टर दत्ता खड़े हैं। लेकिन फिर वह पठान के खयालों में खो जाती है।

2.2.1.2 झूलती कुर्सी :-

प्रस्तुत कहानी आत्मकथन शैली में लिखी है। पूरी कहानी में नायिका को 'मैं' संबोधन से संबोधित किया है।लेकिन एक जगह पर उसके नाम का उल्लेख है 'शेफाली'। शेफाली इंडियन एयरलांइस में नौकरी करती है। अब तक उसकी शादी नहीं हुई। वह एक युवक से प्रेम करती हैं, लेकिन न उसे वह जानती है, ना उसका नाम पता मालूम है। उसे सफेद-नीले-पीले कपड़े पहनने का बहुत शौक था। शेफाली अपनी बाल्कनी में एक झूलती कुर्सी पर बैठकर सामने के रास्ते पर ताकती रहती है। यह सड़क काली और चौडी है। इस पर दूर से पैदल आता आदमी साफ दिख जाता है।

एक दिन इस तरह शेफाली अपनी बाल्कनी में झूलती कुर्सी पर बैठी थी। दूर सडक पर उसे बायीं तरफ से एक आदमी आता दिखलाई देता है। उसके कपडे, उसकी चाल, उसकी दृष्टि की दिशा, सब कुछ उसे पहचाना-पहचाना लगता है। इसके बाल घुंघराले, भूरे थे, उसका रंग सुनहला था। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ता है। शेफाली को लगता है कि वह फाटक तक आ गया है। वह अपनी आँखें बंद करके बैठती है और मन में ही सोचती है, "बस, अब वह फाटक ठेलकर भीतर घुसेगा ....गलियारा पार करके सीढीयां चढेगा ... मेरा दरवाजा खोलेगा ..... मैं अपने दरवाजे पर सिटकनी कभी नहीं लगाती .....कमरा पार करेगा और .....फिर .... बाल्कनी पर मेरे पास होगा।" [10]

शेफाली को लगता है, कि वह तब आँखें नहीं खोलेगी जब वह उसके करीब आकर उसकी झूलती कुर्सी को टोक देगा, कुर्सी झूलना बंद हो जाएगी। बहुत देर बाद जब वह आँखें खोलती है, तब उसे नीचे गलियारे में कोई आदमी दिखाई नही देता। सडक की दायी तरफ एक आदमी आ नहीं, बल्कि चला जा रहा था। वह बिल्कुल अपरिचित और अजनबी लगता है। शेफाली का यह सिर्फ भ्रम था।

अचानक टेलिफोन की घण्टी बजती है। शेफाली कुर्सी छोड़कर फोन पर भागती है। फोन उसके प्रेमी का ही था, और वह उससे मिलना चाहता है। शेफाली 'रैम्बल' रेस्तरे में उसे मिलने बुलाती है। जल्दी से तैयार होकर वह रैम्बल में पहुँच जाती है। रैम्बल की ऊपरी मंजिल पर बीचोंबीच पड़ी कुर्सी पर बैठ कर वह उसका इंतजार करती है। रैम्बल में खूब भीड़-भाड़, चहल-पहल, शोर-शराबा था। शेफाली को लगता है कि, ऐसे भीड भरे वातावरण में उसे कोई नहीं पहचानेगा। तभी उसकी कॉलेज की सहेली नीरा की नजर उसपर पड़ जाती है। कुछ देर दोनों बातें करती हैं। नीरा बताती है, कि उसकी शादी हो गई है और उसे तीन बच्चे भी हैं। नीरा चली जाती है।

रैम्बल में भीड बढती जा रही है, और शेफाली बराबर नजर घुमाकर उसे देखती जा रही है। तभी उसके कॉलेज के लडके मोहन से उसकी मुलाकात हो जाती है। कॉलेज के जमाने में शेफाली ने उसके साथ 'कांचनरंगं' नामक नाटक में काम काम किया था। मोहन बताता है, कि आज भी वह नाटकों में काम करता है। अगले चौबीस तारीख को वह 'गिनीपिग' नाटक मे काम करनेवाला है, उसे देखने आने का शेफाली को निमंत्रण देकर वहा चला जाता है। उसके बाद बहुत देर तक वह अपने प्रेमी का इंतजार करती है। लेकिन वह नहीं आता। उसे लगता है, कि रैम्बल के बजाय उसने कुछ और तो नहीं सुन लिया ?

शेफाली सडक पर बेतहाशा दौडती हुई अपने घर की तरफ चली जाती है, फोन के पास बैठ जाती है। तभी उसका फोन आता है। वह कहता है, कि रैम्बल में उसका दो घण्टे इंतजार किया, लेकिन शेफाली नहीं दिखी। अब शेफाली उसे घर पर ही मिलने के लिए बुलाती है, और बाल्कनी में कुर्सी पर जाकर बैठ जाती है। अचानक कुर्सी थम जाती है। चारों तरफ नजर घुमाकर वह देखती है, लेकिन कोई नहीं था। फिर वह फोन उठाकर बाल्कनी में ले आती है। शेफाली कुर्सी पर बैठी है, और फोन उसके करीब है। उसे लगता है, शायद वह सडक पर आता हुआ दीखे, शायद उसका फोन आए। इस आस में कहानी के अंत में वह बैठ जाती है। इसमें शेफाली का असफल प्रेमिका के रूप में चित्रण किया है।

2.2.1.3 टोपी : -

अविजित बंसल जनरल मैनेजर के रूप में फैक्टरी में काम करता था। अविजित बांकुरा में फर्टिलायझर फैक्टरी लगाने के लिए उद्योगमंत्री मुकर्जी बाबू से मुलाकात कर लाइसेंस लेना चाहता है। अविजित को पता चला है, "मंत्रीजी खानदानी सज्जन है, उनके यहाँ रकम चलती जरूर है, पर जरा तगड़ी।"[11] सिंघानिया जी

मंत्री जी से मिल चुके हैं, लेकिन उन्हें कामयाबी नहीं मिलती। वह चाहते हैं, कि अविजित अपना फ्रीडम फाइटर होने की बात का इस्तमाल करके यह लाइसेंस प्राप्त कर ले। वह अविजित से कहते हैं, "देखो यह काम होना जरूर चाहिए ... मैं कहता हूं भाई, जरूरत पड़ने पर गांधी टोपी लगा लेने में कोई हर्ज नहीं है ... क्यों ठीक है न ?"[12] लेकिन अविजित अपने को इस तरह जलील करना नहीं चाहता।

अविजित काम में मशगूल था, तब सरण दफ्तर में आता है, जो इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में उसके साथ था, आज कल मेरठ में है। उसने आजादी की लढ़ाई में काम किया था, इसलिए सरकार ने उसे गांधी संस्थान चलाने को नियुक्त कर दिया था। सरण अविजित को बताता है कि उसका अजीज दोस्त चड्ढा मर गया। उसके दोनों भी गुर्दे खराब हो गए थे, लेकिन इलाज के लिए उसके पास पैसे नहीं थे। सरकार से भी उसने अपने इलाज के लिए मदद नहीं माँगी थी।

बारह साल पहले का दृश्य अविजित की आँखो के सामने साकार हो गया। 1942 अगस्त में चड्ढा आजादी की लढाई में भूमिगत दल के लिए काम कर रहा था। एक दिन पुलिस से बचता हुआ चड्ढा अविजित के पास आता है, और दल के बीस हजार रूपये रख जाता है। उसके बाद जब-जब चड्ढा मिला, अविजित ने उसे रूपये देना चाहा, पर उसने नहीं लिया। 1945 में, फतेहगढ जेल से छूटने पर वह पहली बार मिला था। 1950 में आजादी मिलने के तीन साल बाद दूसरी बार मिला था रूपया दल का था, लेकिन अब दल नही रहा था। इसलिए चड्ढा अविजित को कहता है, कि रूपया किसी संस्था को दान कर दें। अविजित को मालूम नहीं था, कि चड्ढा मेरठ में रहता है, बीमार है, और उसे पैसे की जरूरत है। उसके पैसे आज भी अविजित के पास हैं।

चड्ढा के मरने का अविजित को दुख हो रहा है। उसे सरण पर बहुत गुस्सा आ रहा है, उसने आज से पहले कभी उसका जिक्र नहीं किया था। इन विचारों में अविजित बैठा था, तभी सिंघानिया जी का फोन आता है, और वह अविजित को बताते हैं, कि सरण कुमार सें मिलकर फैक्टरी का लायसेंस प्राप्त करना है। अविजित ने मन में तै किया था कि वह सरण के पास कभी नहीं जायेगा।

इस तरह कहानी में राजनीतिक भ्रष्टाचार का, नेताओं का और आज कें लोगों की मनोवृत्ति का यथार्थ चित्रण किया है।

2.2.1.4 तुक :-

मीरा अपने पति नरेश से बहुत प्यार करती है। नरेश स्टेट बैंक में, चीफ अकाउण्टैण्ट है। उसका व्यक्तित्व आकर्षक और प्रभावशाली है। शाम को दफ्तर से लौटकर, नहा-धो-खा चुकनेपर नरेश को अगर कुछ ललचाता है, तो वह है, ताश का खेल, यानी ब्रिज। इस खेल में उसे महारत हासिल है। अपने छोटे शहर का तो वह चैम्पियन बन चुका है। अब वह डिस्ट्रिक्ट चैम्पियन बनना चाहता है।

नरेश चाहता है कि मीरा भी ब्रिज खेलना सीख जाए। अपने साथ वह मीरा को भी क्लब ले जाता है । नरेश चाहता है कि जब वह अपनी जीत का विश्लेषण मीरा के सामने करेगा तो वह खेल की खुबसूरत बारीकियों में रस ले सकेगी। लेकिन दोनों की बहुत कोशिशों के बाद भी मीरा ब्रिज खेलना नही सीख पायी थी । फिर भी नरेश उसे अपने साथ खेल देखने ले जाता।

नरेश को ब्रिज के खेल से दूर रखने के लिए मीरा प्यार की तमाम अदाओं का इस्तेमाल कर उसे मोहित करने की कोशिश करती रहती। बहला-फुसलाकर पहले उसे बाहर घुमा लाने का प्रयास करती और फिर अपने साथ बिस्तर पर ले जाती। इतना सब करके मीरा हफ्ते में दो-तीन बार उसे क्लब जाने से रोक लेती थी। पर दो-तीन हफ्तों में ही इस
खेल के लिए उसका उत्साह ठण्डा पडने लगा।

नरेश जब कभी ब्रिज के खेल में हार जाता है, तो उसका सारा गुस्सा वह मीरा के शरीर पर उतारता है। जीत की खुशी भी वह मीरा के देह से प्यार करके ही मनाता है।

एक दिना मीरा शुध्द भारतीय नारी की तरह अपने आप को सँवारती है। नरेश को यह रूप बहुत पसंद है। उसे लगता है , "उसे इसमें एक ठोस घरेलुपन दिखाई देता है, जो उसके स्वामित्व और मेर पालतूपन पर मुहर लगाता है। अन्य व्यावसायिक ट्रेडमार्कों की तरह यह भी स्थायित्व और स्थिरता प्रदान करता है।"[13] दोनों खा-पीकर क्लब चले जाते है। आज फिर वह खेल में हार जाता है। मीरा पर उसे बहुत गुस्सा आ जाता है। लेकिन इस बार की हार का मुहावजा वह मीरा की देह से नहीं लेता। वह सोफे पर बैठा, लैम्प की रोशनी में एडवांसड् ब्रिज नाम की किताब पढने लगता है। इस के बावजूद मीरा अपने आप को इस युग में मिसफिट मानने लगती है। उसे लगता है कि, वह कभी नरेश को खुश नही कर सकेगी।

2.2.1.5 होना :-

प्रस्तुत कहानी की नायिका शादीशुदा है, लेकिन फिर भी एक युवक से वह प्यार करती है। वह उससे इतना प्रेम करती है, उसका होना या ना होना उसके लिए जिंदगी और मौत को सवाल है। नायिका का प्रेमी विदेश मे रहता है। दोनों आज भी एक दूसरे को खत लिखते हैं। दो साल हो गए, उसका खत नहीं आया। इस नीले लिफाफे की अजीब खुशबू नायिका महसूस करती है। दो साल हो गये और अब तो वह यह भी नही जानती कि उस नीले लिफाफे को भेजनेवाला जिन्दा है या मर चुका।

उन दोनों ने अपने मरने की खबर एक-दूसरे को पहुँचाने का प्रबंध करवाया था। नायिका का प्रेमी अपनी वसीयत में उसके नाम कोई छोटी-मोटी चीज, किताब या चित्र छोड़ जायेगा। तब उसके मरने पर उसका वकील उसे खबर कर देगा। नायिका ने भी अपना सब कुछ पति के नाम छोडते हुए, उसका नाम और पता देकर एक किताब उसके नाम छोड़ दी थी। उसके अपने मरने की खबर उस तक न भी पहुँची तो उसका

नुकसान नहीं होगा। जब वह रहेगी ही नहीं तो इस भयंकर पीडा से भी छुट्टी पा लेगी, जो अब, हर पल, उसके अस्तित्व को झकझोरती रहती है। तब जो भी होगा उसे दुःख नहीं पहुँचा सकेगा।

नायिका को लगता है, कि किसी दिन, किसी पल अगर वह नीला लिफाफा आए, उसमें न वह आवाज हो, न गन्ध। तब उसके न होने की खबर उसे मिल जाए। तो उसका यह शरीर धज्जी-धज्जी छितरकर हजार दिशाओं में बिखर सकेगा। वह जानती है, ऐसा कुछ नहीं होगा। जिस तरह वह उससे दूर होने के बाद जीती जा रही है, उसी तरह उसके मरने की खबर सुनने के बाद भी वह जीती जायेगी। इसलिए लेखिका लिखती है - "वह उस बेआवाज-गन्धहीन नीले लिफाफे को हाथ को हाथ में पकडकर चीरेगी। चीरेगी। वकील का लिखा मजबून पढ़ेगी और कुछ नहीं होगा। न बम फटेगा, न विस्फोट होगा, न उसकी देह की चिंदियां उडेगी, न एक बूँद खून बहेगा। वह जड़ खड़ी रहेगी और दुनिया वैसी की वैसी घूमती रहेगी।"[14]

उसके तमाम पुराने पतों पर वह खत डाल-चुकी है। पर कोई जवाब नहीं आया। उसे लगता है, कि आज डाकिया आए और वह जान जाए, वह नहीं है। तब उसके मन की यह दुविधा खत्म हो जायेगी कि शायद उसे अभी जीना है। चलना-फिरना, खाना-पीना, उठना-बैठना, हँसना-बोलना, कॉलेज में पढाना और अपने शरीर को एक शरीर को अर्पण करना ये सब तो उसे फिर भी करते रहना है। वह अनुरक्त न भी रहे तब भी यह सब चलता रहेगा।

प्रस्तुत कहानी में नारी-मन की अनुभूतियों और संवेदनाओं की बडी सूक्ष्म व्यंजना हुई है। नायिका के असफल प्रेम का चित्रण प्रस्तुत किया है।

2.2.1.6 उल्टी धारा -

होली के दिन महफिल जमी हुई थी। मकखासिंह दूसरी लडाई के दौरान सिखों की बहादुरी के किस्से सुनाने लगा। तब नब्बे बरस के श्यामसिंह 1962 में हुए भारत-चीन लडाई का एक किस्सा सुनाते है। पहले वह बताते हैं कि उनकी पत्नी प्रेमा पहले उनसे प्रेम नहीं करती थी। वह गांधीजी की चेली थी। उसका खयाल था कि श्यामसिंह को अपनी जमीन-जायदाद, ओहदा सब छोडकर आजादी के लिए लडना चाहिए। श्यामसिंह का घुडसवारी करना, शिकार खेलना उसे नापसंद था। तब श्यामसिंह के हाथ जान बूकल की 'ए ल्यूसिड इंटरवल' किताब लग गयी। उसमें उसे अपने पूर्वजों की एक दवा का जिक्र मिलता है। उस दवा के खाने से आदमी का सोचने का तरीका बदल जाता है। जो अबतक वह सोचता आया हो, उससे ठीक उलटा सोचने लगता है।

श्यामसिंह उस दवा का इस्तेमाल कर प्रेमा के विचारों को बदलता है, और उससे शादी कर लेता है। लेकिन उन्हे कोई संतान नहीं हुई। तब श्यामसिंह ने 1961 मे बीमार पडने पर अपने भानजे विक्रमसिंह को वारिस बनाया। तब वसीयतनामे के साथ-साथ अपने खानदान का राज भी उसके हवाले कर दिया। विक्रमसिंह

फौज मे मेजर था।

चीनी हमले के दौरान जब बाकी लोग मरने-मारने में व्यस्त थे तब विक्रमसिंह जासूसी में लगा था। चीनियों का जनरल च्यांग लाओत्से अपनी बर्बरता के लिए मशहूर था। काफी दिन खोज करने के बाद उसकी इस कमजोरी का पता चला कि उसे तेज-मिर्चदार खाना बहुत पसंद है। विक्रमसिंह अपने एक वफादार नागा अंगम को चीनी फौज में मिलवा देता है। हिंदुस्तानी फौज के बारे में जानकारी देकर वह उनके भरोसे का आदमी बन जाता है। वहाँ पर वह रसोइये का काम करता है।

एक दिन रातके खाने पर बडे अफसर मिलकर तेजपूर पर हमले की योजना बना रहे थे। उस दिन अंगम ने खूब झोलदार मांस की तरी बनायी और भगवान का नाम लेकर दवा उसमें मिला दी। खाना खाने के बाद च्यांग के विचारों में बदलाव होता है। उसके मुँह से भगवान और इनसान जैसे शब्द सुनकर सब हक्का-बक्का रह जाते हैं। पो-लिन को तेजपूर पर हमला करने की अपनी ही योजना का विरोध करते सुनते ही च्यांग दहाडा। "इतना विनाश करके भी तुम्हे शांति नहीं मिली। अभी कसर बाकी है ? उन बेचारों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ? मेरा हुक्म है कि फौरन लडाई बंद कर दी जाए।"[15] इसके बाद ही अंगम एक नागा मुठभेड में मारा गया और 1965 की पाकीस्तान मुठभेंड में विक्रमसिंह भी मारा गया।

2.2.1.7 खरीदार :-

प्रस्तुत कहानी की नायिका नीना सहायक कमिशनर के पद पर कार्यरत है। नीना पर्याप्त सुंदर न होने के कारण उसका विवाह नहीं हो पाया। एक दिन नीना दफ्तर से थकी हुई लौटी थी, तब उसे बाहर बारात का शोर सुनाई देता है। उस शोर को सुनने के बाद नीना को सुनील की याद आती है। सुनील एक कवि है, आजकल उसका साथ नीना को अच्छा लगता है। एक हफ्ते से वह सुनील से नहीं मिली।

पिछले हफ्ते सुनील ने नीना से विवाह के बारे में बात की थी। सुनील बताता है की, उसका विवाह हो चुका था, लेकिन विावह के दो वर्ष के भीतर ही उसकी पत्नी चल बसी थी। नीना से मिलने के बाद फिर एक बार उसके मन में विवाह का खयाल आ जाता है। इस प्रस्ताव को पिछले हफ्ते उसने नीना के सामने रखा है।

नीना बारात को देखते देखते बगीचे मे चहलकदमी कर रही थी, और पिछले दर-बारह वर्ष के भूले-बिसरे दृश्य उसे याद आते रहे। जिन क्षणों को गहरी पीडा के साथ जिया था, वह एक-एक पन्ना स्पष्ट होकर उसके सामने आने लगा और वह हलके विनोद के साथ पढती गयी। नीना को वह दिन याद आ जाता है, जब उसकी माँ ने उसे यह खुशखबरी सुनाई थी, कि उसका विवाह तै हुआ है। लेकिन जब उसे पता चलता है कि बीस हजार दहेज देने के बाद वह लोग मान गये हैं, तब नीना इस विवाह से इन्कार कर देती है। तब उसके मन में यह विचार आता है - "जितना खराब माल उतना ही महंगा इश्तहार। जिन्दगी खुद एक इश्तहार बनकर रह गयी है। पूरी दुनिया दो गुटों में बटी है - दुकानदार और खरीदार। ठीक है, मैं भी खरीदार बनूंगी, उसने तय

किया। विक्रेता नहीं खरीदार।"[16]

आई.ए.एस. की परीक्षा पास करना इस मंजिल की तरफ उसका पहला कदम था। दूसरा कदम उठाँ, जब वह प्रशिक्षा समाप्त करके मैसूर के एक छोटे कस्बे में सहायक कमिशनर नियुक्त हुई। वह संकल्प और निष्ठा के साथ एकाकी पथ पर चलती रही। काम संभालने के प्रारंभिक दिनों में नीना की सबसे पहली मुलाकात वहाँ के ए.एस.पी. साहब से हुई। उनके साथ वह लम्बाडी गाँवो का दौरा करती है।

एक दिन दो आदिवासी गुटों मे दंगा हो गया था। उन्हें रोकने के लिए ए.एस.पी.साहब नीना से गोली चलाने का आदेश माँगने आते है। तब खुद नीना जीप पर सँवार होकर उस जगह पहुँचती है। लेकिन उसकी चेतावनी को एक औरत की आवाज समझकर भीडमें से एक झनझनाता पत्थर आकर सीधा उसके कन्धे पर लगता है। फिर भी वह गोली चलाने का आदेश नहीं देती।

आज उसके पास सबकुछ है। गाडी है , बंगला है, नौकर-चाकर है। सफलता का अपना एक रूप होता है, वह भी उसके पास है। और जो नहीं है, कभी भी ले सकती है। आज वह यही सोच रही है, कि एक पति खरीद लें इतने पैसे आज उसके पास है।

इस तरह प्रस्तुत कहानी में नीना के माध्यम से मृदुला गर्ग ने विवाह की समस्या, दहेज की समस्या, आदि समस्याओं का चित्रण किया है।

2.2.1.8 प्रतिध्वनि :-

प्रस्तुत कहानी पद्यात्मक रूप मे लिखी गई है। इसमें तीन प्रकार के समुहों का वर्णन किया है। पहला समूह है क्लब में लय, ताल, सुर के साथ नाचनेवाला, गानेवाला समूह। इस समूह का नेतृत्व करनेवाला नेता है, वह भीड को आदेश देता है, और भीड उसके आदेशों का पालन करती है। चारों तरफ थिरकते कदम, बलखाते बदन, तालियां बजाती हथेलियां, सिरों के ऊपर उठे सर्पीले सरसराते हाथ हैं। अगर कोई कहनेवाला न हो तो वे क्या इस तरह कूद सकते हैं। झूम सकते हैं, चीख सकते हैं ? उनके घूमने की एक धुरी, एक बिन्दु है। वे इस चौकोर दायरे से बाहर नहीं भाग सकते। क्योंकी वे अलग-अलग व्यक्ति नहीं, समूह के अवयव मात्र हैं। समूह उसकी डोरी से बंधा उसकी आवाज में कैद है। आदेशों के थम जानेपर सब अपने-अपने घर जाकर अपने कुष्ठित व्यक्तित्वोंकी जंजीरो मे जकडे अपनी-अपनी दिनचर्या में जुट जायेंगे।

दूसरा समूह है, मंदिर में गीत गाता, लोगों का समूह। इस समूह के पैर भी झूम-झूम लडखडाते हैं, दायें-बायें गरदने झुकती है, घण्टियों की आवाज गूंजती हैं, मंजीरें खनखनाते हैं, और मुँह से राधा-कृष्ण के भजन गाते है। वहा कहता है, भगवान का अवतार है, भगवान व्यक्ति के लिए नहीं होते। वह समुह का संचालक है। भगावान व्यक्ति को बहकाता है, फिर भी वह गुमराह नहीं होते। इसलिए तुम उसकी मानो, ऐसा कहता है।

तीसरा समूह है, सरहद पर देश के लिए लडने वाले सिपाहियों का समूह। सिपाही इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे लगा रहे हैं। सभी एक के पीछे एक कतार में सीधे तने बदन खडे हैं। इन सिपाहियों का भी एक नेता है, जो आदेश देता है। उसके आदेश के अनुसार ही सिपाही आगे बढते हैं, गोली चलाते हैं, और दुश्मन को तहस-नहस करते हैं। यहाँ पर सभी समूह में जिम्मेदारी उसके नेता पर है। लेकिन जब समूह बंट जायेगा, बिखर जायेगा, बिखरकर व्यक्ति बन जाएगा। जहाँ व्यक्ति के हर कदम की जिम्मेदारी उसके अपने कंधो पर होगी।

अंत में लेखिका कहती है, कि इन तीनों समुहों में तुम किस समूह की प्रतिध्वनि बनकर जीना चाहते हो, जी सकते है, इसका चुनाव करने का तुम्हें अधिकार है।

2.2.1.9 संज्ञा :-

प्रस्तुत कहानी की नायिका हर वक्त अपने पास एक शीशा रखती हे, जब-तब निकालकर उसमें देख लेती है। वह कहती है, कि अगर शीशा न होता तो हम अपनी सुरत खुद न देख पाते। हमेशा अपने को दूसरों की नजरोंसे देखते। नायिका जब-तब पर्स में से शीशा निकालकर देखने लगती है। सामने वालोंको लगता है कि उसे अपनी सुरत पर गरुर है।

नायिका अपने शीशे का राज बताती है। यह शीशा देखने में जितना मामूली है, वाकई है नहीं। उसमें उसे अपनी सुरत नहीं दिखती। वह तो एक बहाना है। उस शीशे में उसे अपने प्रेमी का चेहरा दिखाई देता है, और बाकी सब दिखलाई देना बंद हो जाता है। आज अचानक वह सामनेवाला आदमी उससे कहता है, वह उससे प्रेम करता है। बारह साल के बाद इस बात को वह नायिका के सामने व्यक्त करता है, क्योंकि आज तक वह उससे डरता था। लेकिन उसकी हर बात मान लेता था।

एक बार वह नायिका से कहता है, "मां कहती थी औरत पर कभी हाथ मत उठाओ चाहे वह तुम्हारी नाकमें दम ही क्यों न कर दें। ऐ खुदाया, मेरी मदद कर। यह औरत कुछ भी करे मैं अपनी मां की हिदायत याद रख सकूं। बस, इतना ही कहा था मैंने, और तुम्हारी तरफ ताका-भर था कि तुमने तड से मेरे मुंह पर तमाचा जड दिया।" [17] लेकिन इस बात को वह याद नहीं रखती।

नायिका के शीशे को यही राज है, कि उसमें वह अपनी सुरत नहीं, बल्कि अपने प्रेमी का चेहरा देखती है। इसलिए वह अंत मे कहती है, राज राज रहा तो शीशा उसके पास बना रहेगा। बारह साल का बिछुडा, शीशे में कैद उसके हमदम को वह मिल पाएगी।

2.2.1.10 सार्त्र कहता है

प्रस्तुत कहानी की नायिका एक तत्वज्ञ है। त्रिवेणी के कमरे में नायिका को छोड चौबिस जिस्म बैठे हैं। सबके चेहरेपह दाढी है। त्रिवेणी का यह कमरा बुध्दिजीवियों का अड्डा है। सबके सामने चाय का प्याला

है। बगल में किताबों का बंडल है। आज जब नायिका घर से निकली तब दरवाजे पर एक लिफाफा पडा मिला था।

नायिका लिफाफा चीर देती है। बहुरंग लिफाफे के भीतर से निकला खत एक साल पहले उसनेही अपने प्रेमी को लिखा था। उस वक्त वह हंगरी में था। उसने कहा था, खत वह डाकखाने से उठा लेगा लेकिन उसका कोई पता नही है। इसलिए नायिका के खत पर लिखा है - आने तक इन्तजार करें।

नायिका अपना खत बार-बार पढ रही है। पन्ने के उपर डली तारीख, पन्ने के नीचे लगी मुहर, लिफाफे के वापसी का वक्त, डेड लेटर आफिस का एक शब्द, लम्बा ऐलान बेदावेदार। सबमिलकर एक छोटी-सी कहानी कह रहे हैं - तीन शब्द लम्बी, वह नहीं है। बाकी लोगों के सूखे शोर के बीच उसका भीगा चेहरा फुसफुसा रहा है, मैं नहीं तो तुम कैसे जिंदा हो। सार्त्र का कहना है, जो नहीं है, वह नहीं है, जो है वह है। लेकिन इस बात को नायिका समझ नहीं पा रही। उसका प्रेमी अब इस दुनिया में नहीं इस बात का स्वीकार वह नहीं कर पा रही।

2.2.1.11 अलग-अलग कमरे :-

प्रस्तुत कहानी में डाक्टर नरेंद्रदेव एक गरीब पिता के इकलौते बेटे थे। बचपन से ही इतने मेधावी थे की किसान पिता ने अपना सर्वस्व बलिदान करके उन्हें उच्च शिक्षा दिलवाने की ठान ली। जो चार बीघा जमीन उनके पास थी, उसे बेचकर उन्होने पुत्र की शिक्षा का प्रबंध किया और शहर में रहकर क्लर्की करके परिवार का पालन पोषण करते रहे। पुत्र नरेंद्रदेव ने भी उनके त्याग की आन रखी और अव्वल दर्जे में एम.बी.बी.एस. पास किया। डाक्टरी की डिगरी मिलने पर, हर्ष के अतिरेक में गरीबो की सहायता का जो संकल्प नरेंद्रदेव ने किया, आश्चर्य था कि सफल और व्यस्त डॉक्टर बन जाने पर भी, उसे नहीं भूले।

बरेली शहर में डॉक्टर नरेंद्रदेव को सब जानते थे। जब किसी मरीज के पास दवाइयों के लिए पैसे नहीं होते है, तो नरेंद्रदेव अपने पास के पैसे उन्हे देते हैं। सौभाग्य से आदर्श डाक्टर होने के साथ-साथ नरेंद्रदेव परिश्रमी और योग्य भी थे, जिससे फीस में मिले रूपयों का काफी अंश निर्धन रोगियों में बांटकर भी उनके पास इतना धन बचा रहता था कि वे अपने परिवार की हर जायज और नाजायज मांग पूरी कर सकें। वह एक आदर्श पिता भी थे।

नरेंद्रदेव को तीन बच्चे हुए। एक लड़का, सुरेद्र देव और दो लडकिंया, उषा और आशा। तीनों के लिए अपनी कोठी में उन्होंने दो-दो कमरे रिजर्व कर दिये थे। अलग-अलग कमरों की दहलीज को अपनी-अपनी सम्पात्ति की सरहद मानकर वे उसकी रखवाली में जुट गये थे। बच्चों की इस दीक्षा का तीखा अनुभव डाक्टर नरेंद्रदेव को सबसे पहले तब हुआ, जब उनके बचपन के दोस्त मोहनलाल और उसकी पत्नी का सडक-दुर्घटना में देहांत हो गया, और वे उनके सोलह वर्षीय लडके वंशीधर को घर ले आये। तब सुरेंद्र उसे

अपने कमरे में रहने नहीं देना चाहता और नरेंद्रदेव की पत्नी गंगाबाई दो जवान लडकियां घर में होने के कारण पराये लडके को घर में रखना नहीं चाहती।

हारकर डाक्टर देव ने वंशीधर को अलीगढ होस्टल में रखकर उसे डाक्टर बना दिया। जब वंशीधर एम.बी.बी.एस. करके बरेली आया तो जो भय गंगाबाई ने पांच साल पहले व्यक्त किया था, सहसा साकार हो उठा। उनकी बडी लडकी उषा ने छिपकर मंदिर में जाकर आर्यसमाजी पध्दति से वंशीधर से विवाह कर दिया, और यह बात सब बतायी जब वह मॉ बननेवाली थी। पहली की इस चोट को भुलाने के लिए डाक्टर देव ने आशा के लिए वर खोजने में कोई कसर नहीं छोडी। दौड-धूपकर ऐसा लडका पा लिया जो मेधावी और होनहार होने के साथ घर-बार से भी संपन्न था। पर विवाह के कुछ ही दिन बाद आशा पति को लेकर बरेली लौट आती है। आशा पिता की सम्पत्ति में अपने हिस्से की मांग कर वहीं बरेली में अलग घर बनाकर रहने लगती है। सुरेंद्र देव भी एक धनिक उदयोगपति की एकलौती लडकी से विवाह कर लेता है। उसके बाद आगे की पढाई के लिए विलायत चला जाता है। इस बीच नरेंद्रदेव की पत्नी का देहांत हो जाता है।

विलायत से लौट आने पर तीन बरस तक सुरेंद्रदेव पिता के साथ काम करता है। बाद में वे जानबूझकर रिटायर हो जाते हैं और बरेली का दवाखाना सुरेंद्रदेव को सौंप गर्मियों में मंसूरी और सर्दियों में देहराडून रहने लगते हैं। तब साठ की आयु पर पहुँचते-पहुँचते उनके दायें अंग पर फालिज पड़ता हैं और वे बरेली लौट आते हैं। फिर भी आज तक वह एक नेक इन्सान, परिश्रमी आदर्श पिता बने रहते हैं। लेकिन उनका बेटा बहुत खुदगर्ज बन गया है। हर काम को वह पैसों में तोलता है।

एक बार नरेंद्रदेव के मित्र पाठक जी को फालिज पड़ता है, तब रात के समय उनका बेटा श्याम सुरेंद्रदेव को लेने आता है। लेकिन उसके पास फीस के पैसे होने के कारण कम्पाउंडर उसे वापस भेजता है। यह बात नरेंद्रदेव को मालूम होती है, तो सुरेंद्रदेव को बुलाकर वह डाँटते है। तब वह पाठक जी के घर चला जाता है, लेकिन तब तक वे मर जाते हैं। दूसरे दिन नरेंद्रदेव अपना चेक बुक लेकर व्हिल चेयर में बैठकर पाठकजी के परिवार से मिलने चले जाते हैं। उन्हें देखकर पाठक की पत्नी धाड मार कर रोने लगती है। "अरे भैया, अगर तुम पहले आ जाते तो कौन जाने ये बच ही जाते,"[18] तब नरेंद्रदेव अपनी लाचारी बताते हैं। लेकिन तब भी पाठकजी की पत्नी उनसे कहती है, "तुम्हारे हाथ में शफा है, सीने में दिल, तुम मुर्दे को भी जिला सकते हैं।"[19] इस सब के बाद डाक्टर के मन में विचार आता है, कि फलिज उनके बदन पर पडा है, दिलो-दिमाग और नजर पर नहीं। और बाएं हाथ से चेक लिख सकते हैं तो नुस्खा भी लिख लेंगे। तब वह अपने लिए दवाखाना खोल बैठने का इंतजाम करने के लिए कम्पाउंडर को कहते है, और सुरेंद्र को अपने लिए कोई दूसरा दवाखाना ढूँढने के लिए कहते है।

इस तरह प्रस्तुत कहानी में ईमानदार, परिश्रमी तथा आदर्श पिता के रूप में नरेंद्रदेव तथा खुदगर्ज,

आपमतलबी, लालची रूप में सुरेंद्रदेव का चित्रण किया है। इन दोनों पिता पुत्र के माध्यम से वर्तमानकालीन बदलते सामाजिक संबंधो का चित्रण किया है।

2.2.1.12 खाली :-

निर्मला इस कहानी की नायिका है। निर्मला के पति दफ्तर और तीनों लडके सुबह कालेज में चले जाते हैं, तो सारा दिन वह घर में अकली रह जाती है। खाली समय उसे काटने को दौडता है। शाम को वह अपने-अपने अनुभव, और अपने-अपने संवाद लेकर लौटते हैं। खाने के लिए पुकारने पर सब आकर मेज पर इकटठे हो जाते हैं। मेज पर खूब रौनक रहती है। जब बहस राजनीति पर उतर आती है, तब चारों उत्तेजित होकर एक-साथ ही बोलने लगते हैं। बीच-बीच निर्मला भी कुछ बोलती है, तो कोई उसकी बात नहीं काटते। बस, उसके कहने के बाद फिर अपनी बातों में डूब जाते हैं। इसलिए निर्मला को अपना जीवन सूनी-सपाट मैदान की तरह लगता है, उसके घर में न झटके लगते हैं, न जलजला आता है। तब ज्वालामुखी वाले घरों से उसे ईर्ष्या-सी हो जाती है।

निर्मला के पास बहुत खाली समय होता है। इसलिए अगर उसपर किसी बाहरी आदमी की जिम्मेदारी आ पडती है, तो उसे सुकून मिलता है। पास-पडोस के लोगो के घर में झगडे होते है, तो उन औरतों का दुखडा सुनने, उन्हे तसल्ली और नसीहत देने मे निर्मला अपना खाली समय बिताती है।

बहुत दिनों से निर्मला के मकान के उपर का मकान खाली पडा था, उसमें रहने जब नए किरायेदार आ जाते हैं, तब निर्मला का मन ताजा हो जाता है। कुछ देर बाद औरत अकेली आती है, तो उसे और अच्छा लगता है। लेकिन जब उस औरत से वह मिलती है, तो उसका सारा उत्साह खत्म हो जाता है। वह औरत पढ़ी-लिखी और नौकरी करनेवाली थी। उसके पति भी नौकरी करते थे, और दोनों भी आधुनिक विचारों वालों थे। इसलिए जब निर्मला रात का खाना भेजना चाहती है, तो वह उससे कहती है, "ऐसा करेंगी, तो सारा मजा ही किरकिरा हो जाएगा। मैंने तो तय कर रखा है कि आज रात का खाना दिनेश बनायेंगे। मकान शिफ्ट करने में जरा मदद नहीं की बच्चू ने।"[20] यह सुनकर निर्मला चकित हो जाती है। दोनों भी नौकरी करते हैं, इसलिए घर के कामों में भी दोनों बराबर हाथ बटाए ऐसा उसे लगता है।

उनके विवाह को पांच साल हो गए हैं, लेकिन अबतक उन्हें बच्चा नहीं हुआ था। तब निर्मला उससे कहती है, कि उसके लिए बच्चा होना जक्तरी है, ताकि बच्चे के सहारे उसकी शामें कट जायेंगी। दिनभर बच्चे को वह संभालेगी, नहीं तो उसके लिए बढिया आया का इंतजाम करेगी। वह कहती है, जब वह बच्चा चाहेगी, तो नौकरी छोडकर भी उसे पालेगी। यह सब सुनने के बाद निर्मला का चेहरा बुझ जाता है। निर्मला के मन में विचार आता है, कि इससे तो उपर वाला मकान खाली ही पडा रहता तो अच्छा था। निर्मला की भावनाओं का वह मजाक उडाती है। इस तरह निर्मला का खाली समय खाली ही रह जाता है। लेखिका ने

इसमें अकेलेपन की समस्याका चित्रण किया है।

2.2.1.13 अंधकूप में चिराग :-

प्रस्तुत कहानी मनोवैज्ञानिक कहानी है। इसमें लेखिका ने अपने व्यक्तिगत अनुभव और समजा जीवन को जोड दिया है। समाज की रूढ़ियों से अलग वह अपना जीवन जीना चाहता है, लेकिन अंत में फि र उसे समाज का हिस्सा बनना पडता है। समाज का एक नेता होता है, और उसके आदेश अनुसार ही सब एक के पीछे एक लम्बी कतार लगाकर चलते रहते है। लेकिन समाज क्यों नहीं पूछता। लेखिका को लगता है, कि सब लोग साथ-साथ क्यों नहीं चलते। कदम से कदम मिलाकर, हाथ में हाथ डालकर कुछ लोग तो साथ-साथ चलें।

पंक्तिवार चल रहे छोटे-बडे आदमियों की भीड के पिछले हिस्सों से निकलकर एक आदमी आगे बढ आता है। वह उसके बराबर खडा होता है, एक साथ कदम उठाकर दोनों कुछ दूर तक चलते हैं और ठिठक जाते हैं। वह इस बात से संतृष्ट नहीं रह सकी कि उसकी बात खुद उसकी समझ में तो आती है। लेकिन वह चाहती है, कि उसकी बात कोई और समझे और उसे भी समझाए। इसलिए वह समाज के नियम और सिलसिले में बाधा डालती है, एक आदमी को कतार से अलग से अलग कर लेती है।

वह उसे साथ लेकर कमरे में चली जाती है। कमरे की खिडकियां और दरवाजे बंद कर लेती है। वह महसूस करती है, कि पंक्तिवार चल रहे समाज के प्राणी कमरे के चारों तरफ घेरा डालकर खडे हो गये हैं। उनकी आवाज की बुलंदियों को बढ़ दरवाजे और खिडकियां भीतर आने से रोक नहीं सकती। एक नन्हा-सा चिराग उन दोनों के बीच जल उठता है। बाहर खड़ी भीड़ की आवाज की आंधी के नीचे वह नन्हा चिराग पतझड के आखिरी पत्ते की तरह कांप उठता है।

वह देखती है, पंक्तिवार वे लोग उसके बराबर से निकलकर जा रहे हैं, और उसकी बगल में ठिठककर खडा रहनेवाला वह पंक्ति में सबसे पीछे है। उसके अंदर जलता चिराग बुझ जाता है, और वही जिन्होंने चिराग को बुझाना चाहा था, शिथिल चाल, उसका मातम मनाते चले जाते हैं। अंत में कतार में बंधे लोग अंधो की तरह चले जाते हैं।

2.2.1.14 गूंगा कवि :-

गोपालदास छोटे से गांव में रहते हैं। उनके पिता जमींदार थे, और उनकी यह जमींदारी वह आगे चलाते हैं। उन्होने अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. किया हैं। अंग्रेजी में इसलिए क्योंकि सब बडे आदमी अंग्रेजी पढते हैं और उसके पिता नहीं चाहते थे कि वह किसी से पीछे रहे। दिनभर वह खेत का काम करते हैं, पास में रूपया है और श्याम को वक्त ही वक्त होता है। उसे कविता के प्रति लगाव है, लेकिन वह कवि नहीं है। उसे जितना शौक कविता पढने का है, उतना ही सुनने का।

एक दिन वह लिखने बैठ ही जाते हैं। उसके दिलो-दिमाग में जो भी आया, उसने लिख डाला। उसने कविता अंग्रेजी में लिखी है। उसे अपनी लिखी कविता में व्याकरण की बेशुमार गलतियां नजर आने लगती हैं। उसने शुरू से आखिर तक दुबारा उसे पढा और गलतियां सुधार ली। फिर लेखक का मुखौटा उतारकर आम पाठक की तरह उसे पढ़ता है। उसे फिर उसमें व्याकरण की गलतियां नजर आती हैं, फिर उसे सुधार लेता है। तीसरी बार पढने पर उसमें कुछ नयी गलतियां दिखाई देती हैं।

कविता के व्याकरण की गलतियों को सुधारने के लिए लोकल हाईस्कूल के हेडमास्टर जेकब को बुलाते हैं। जेकब साहब मद्रास यूनिवर्सिटी से अंग्रेजी में एम.ए.हैं, और अंग्रेजी भी पढाया करते हैं। उन्होंने गोपालदास के सुधार को सुधार कर तमाम पुरानी गलतियां दुरूस्त कर वापस रख दी थी। गुस्से से वह कापी दूर फेंकता है। फिर वह अपनी पत्नी को व्याकरण को नजर अंदाज करके मीठी आवाज में रस-ले-लेकर कविता सुनाता है। पत्नी से पूछता है, कि कविता कैसी लगी ? वह कहती है, आपने लिखी है, तो अच्छी ही है। फिर वह सोचता है, ऐसी भाषा में क्या लिखना जिसमें सौ गलतियां व्याकरण की हों और बीवी तक समझ न पाए।

दूसरी बार वह उर्दू में कविता लिखने बैठ जाता है। अंग्रेजी कविता को ही उर्दू में बदलने की कोशिश करता है। लिखने के बाद पढ़ना शुरू करता है, पर आधे से भी कम पढने के बाद उसे अजीब लगने लगता है। तब वह कविता लेकर मौलवी साहब के पास जाता है। मौलवी साहब कविता पढकर उसपर व्यंग्य करते हैं। कापी उनके हाथ से खींचकर वह घर आता है। उसे लगता है इनसे तो उसकी पत्नी अच्छी है, जो उसकी कद्र करती है। तब वह पत्नीको बुलाकर कविता हिंदी में उतरवाता है। फिर उसे पढकर सुनाने के लिए कहता है। कविता सुनने के बाद उसे लगता है, "उसके मुंह का स्वाद ऐसा हो गया जैसे उस चटनी को खाकर हो जाता है जो ठीक से पिसी न हो, जिसमें कभी इमली का स्वाद आए तो कभी नमक का और कभी गुड का।"[21] गोपालदास के मन में आता है, उसके पास विचार और भाषा दोनों हैं, फिर भी वह गूंगा है।

2.2.1.15 अदृश्य :-

देवेने एक डॉक्टर है और उसकी पत्नी का नाम वीना है। देवेन अधिक समय क्लिनिक में ही गुजारता है। आजकल उसे यह भी याद नहीं रहता, कि उसके घर में जो औरत है वह उसकी पत्नी है। वह वीना को पूरी तरह भूल चुका है। पहले जब वह घर पहुंचकर वीना को सामने पाता था तो एक झटके के साथ उसकी आंखों पर पडा नकाब दूर उड जाया करता था और वह वीना को देखता तो था ही, महसूस भी करता था।

वीना भी डॉक्टर देवेन नहीं बनना चाहती थी। वह वीना थी और वीना ही रहना चाहती थी, कम से कम, उन क्षणों में जब वह डाक्टर देवेन की बाहो में नहीं होती थी। इसलिए अन्य पुरूषों के साथ अधिक समय बिताती है। उनपर पैसा लुटाती है, उन्हें किमती उपहार भेंट करती है, उनकी सिफारिश दफतरों में कर देती है,

उनका कोई अटका काम सुलझा दिया करती है। वीना का एक बेटा भी है, जो आजकल मेडिकल कॉलेज में पढ रहा है। आजकल देवेन को वीना तो क्या अपर्णा भी ठीक से नहीं दिखती थी।

वीना के होते हुए देवेन अपर्णा नाम की लडकी से प्रेम करता है। अपर्णा को देवेन ने एक फ्लॅट दिलवा दिया था। अब खाने की मेज और सोने के लिए बिस्तर के बीच मंडराती उसकी जिन्दगी को घरों में बंट गई थी। और अब बिस्तर पर उसे एक ही स्त्री नजर आने लगी थी, जिसका नाम अपर्णा था, जो उसकी रक्षिता थी। अपर्णा देवेन से प्यार करती थी, लेकिन उससे भी ज्यादा वह उसके नाम से प्यार करती थी। इसलिए वह चाहती है, कि देवेन अपनी पत्नी को तलाक देकर उससे शादी कर ले ताकि देवेन का नाम उसे मिल जाए। देवेन उसे कहता है, कि मैं तुम्हें सब कुछ दे सकता हूँ, लेकिन शादी नहीं कर सकता।

डाक्टर देवेन एक और नया क्लिनिक खोलता है। देवेन के क्लिनिक की शोहरत बढ रही थी। उसकी काबिलीयत का डंका बराबर बज रहा था। विदेशी गाडियों की रेलचेल के बीच से पैदल फटेहाल मरीज भी डाक्टर देवेन तक पहुंच रहे थे। तब एक दिन अपर्णा देवेन से कहती है, "मै तुम्हारे बच्चे की मां बनने वाली हूं, "[22] अपर्णा फिर देवेन से शादी की बात करती है, लेकिन देवेन कहता है, जब तक उसकी पत्नी जिंदा है, उससे शादी नहीं कर सकता।

आजकल डाक्टर देवेन बहुत खुश रहता है। आजकल उसकी नजर हमेशा भविष्य पर रहती है। वह सोचता है, अच्छा हुआ उसने दो क्लिनिक खोल दिये। दोनों बेटों को एक-एक दे जाएगा। इसी वर्ष उसका और वीना का बेटा डाक्टरी पास करके घर आएगा। इसी वर्ष उसका और अपर्णा का दूसरा बेटा पैदा होगा। लेकिन अपर्णा देवेन की बातें सुनकर यह दृढ संकल्प करती है कि, देवेन कि पत्नी को वह मार देगी ताकि उसे देवेन का नाम मिल जाय। इसलिए एक दिन तीन आदमी भेजकर वीना को मारने की कोशिश करती है। देवेन उसे घायल स्थिति में अस्पताल ले आता है, लेकिन वह बच नहीं पाती। इतना कुछ हो जाता है, लेकिन देवेन को इस बात का पता नहीं होता कि जिसे वह अस्पताल ले आया है वह उसकी पत्नी है। पुलिस अधिकारी के पूछने पर क्लिनिक के कर्मचारी कहते है, कि ये तो मिसेज देवेन हैं। तब देवेन उसकी तरफ देखता है। उसकी समझ में आ जाता है, कि मिसेज देवेन बनने के लिए अपर्णा ने वीना को मार दिया है।

2.2.1.16 एक चीख का इन्तजार :-

कहानी की नायिका गर्भवती है। प्रसुति के लिए उसे अस्पताल में लाया गया है। उसे बहुत दर्द हो रहा था। लेकिन प्रसुति के लिए अभी बहुत समय था। वहं की सिस्टर इससे परेशान होकर कहती है, "ओ गॉड, छः बजे से पहले नहीं होगा। जब भी मेरी डेट होती है, कोई न कोई बच्चा पैदा करने आ जाती है,"[23] वह बार-बार कह रही है, दर्द बहुत है। उसका देवर सुरेश उसे समझाता है, और सब कमरे के बाहर चले जाते है। इससे बडी और क्या सजा हो सकती है-एक इन्सान को दारूण व्यथा से पीडित दूसरे इन्सान के पास अकेले

बन्द कर दिया जाये और चारों ओर सिसकती, उफनती खामोशी फैला दी जाये। छ: बजे से पहले ही उसे लेबर रूम में ले जाते हैं। कुछ देर बात आपरेशन के लिए दस्तखत लेने सिस्टर आ जाती है। सुरेश दस्तखत कर देता है। कुछ देर बात डाक्टर बाहर आकर मुबारक बात देते हैं। लडका पैदा होता है, और वह भी साढ़े सात पौंड का।

इस तरह प्रस्तुत कहानी में एक औरत की प्रसुति का दर्दनाक चित्रण किया है। नारी के मां बनने की स्थिती का यथार्थ चित्रण इस कहानी में किया है।

2.2.2 शहर के नाम :-

प्रस्तुत कहानी संग्रह सन 1990 में प्रकाशित छठा कहानीसंग्रह है। प्रस्तुत कहानीसंग्रह में कुल मिलाकर 11 कहानियाँ संकलित हैं। इस कहानीसंग्रह की अधिकांश कहानियाँ किसी-न-किसी नारी समस्या से जुडी हैं। साथ ही भारतीय परिवेश में नारी-जीवन के बहुरंगी रूपों का चित्रण हुआ हैं। "इन कहानियों में नारी-व्यक्तित्व के अभाव-तनाव संघर्ष और प्रेम जैसे मनोभावों की मनोरम व्यंजना हुई हैं। कहानियों की भाषा संरचना में भी कथ्य के अनुरूप ही सरसता और सबलता के गुण समाहित है।" [24]

प्रस्तुत कहानियों का हम क्रमश: विवेचन करेंगे।

2.2.2.1 तीन किलो की छोरी :-

शारदाबेन गाँव में दाई का काम करती है। उसे महीना सौ रूपया तनखा मिलती है। शारदाबेन अपने को ग्राम सेविका कहलाना पसंद करती थी। तभी तमाम ग्रामसेविकाओंमे अव्वल ठहरायी जाती है। एक दिन वह तीन किलो की छोरी जनवाती है। उसकी माँ लल्लीबेन से वह सूकडी लेना चाहती है। लल्लीबेन का परिवार सुखी है, दो भैंसे हैं, पाँच वीघा खेत भी है और उपर से मौसम भी सहारेवाला है।

उस दिन घर पहुँचकर शारदाबेन अपने मरद से कहती है, "आज का दिन बडा खराब बीता, तीनों-की-तीनों चुडैल छोरियाँ जनी गयीं। किसी ने टुकडा भर गुड भी न धरा हाथ पर। फिर मोटीबेन से बतलाया तो शीत पड़ा कलेजे में, कहने लगीं, 'ले शारदाबेन, सूकडी खा। छोरे-छोरी में कोई फरक नहीं है। अरे, तू भी छोरी है, है कि नहीं, फिर सौ रूपये कमा रही है कि नहीं, महीने-के-महीने। सारा गाँव तेरी इज्जत ..."[25] उस दिन मार खाते-खाते बची थी शारदाबेन।

तीन किलो की छोरी को लेकर शारदाबेन लल्लीबेन के घर पहुंचती है। उसे लल्लीबेन को देते हुए काला टिका लगाने के लिए कहती है। तब उसकी सास मनुबेन और पति से बहुत ही भली-बुरी बातें उसे सुननी पडती हैं। वह उनके तिरस्कार की भागी बनती है। मनुबेन सारा-का-सारा दूध डीपो बिकने भेज देती है। इससे शारदाबेन को उस घर में खाने को कुछ नहीं मिलता। लेकिन रोती लल्लीबेन खटिया की बीनाई में से टटोलकर एक रूपये का नोट निकालकर उसे दे देती है। इस तरह तीसरी बार भी बेटी ही जनने के कारण

परिवार के सदस्यों का तींखा अपमान झेलती है और स्वयं भी इस दुख से भीतर ही भीतर टूट जाती हैं।

शारदाबेन को पासवालें छप्पर से नन्नीबेन की चीख मारकर रोने की आवाज सुनाई देती है। पिछले हफ्ते ही उसने एक लडके को जन्म दिया था। लेकिन घर में दूध होते हुए भी वह बच्चे को दूध नहीं रख पाती। क्योंकि भैंस का कर्ज चुकाने के लिए सारा दूध उसे बेचना पडता है। पैसे के लिए उसे छोटे बच्चे को घर में छोड ट्रक पर खाद के बोरे लादने का काम करना पडता है। बच्चे की तरफ वह ध्यान नहीं दे पाती, और बच्चे की मृत्यू हो जाती है।

इस कहानी में निम्नवर्ण की दो स्त्रियों की विवशताओं का चित्रण है। लल्लीबेन वजन में तीन किलो की स्वस्थ बच्ची को जन्म देने पर भी अपनी सास और पति के तिरस्कार की भागी बनती है। नन्नीबेन है जिसने पहली बार एक बच्चे को जन्म दिया किंतु अर्थाभाव के कारण उसे मजदूरी करने जाना पडता है, परवरिश के अभाव में उसके बीमार बच्चे की मृत्यू हो जाती है। इस कहानी में जहां लल्लीबेन के दु:ख का कारण लगातार तीसरी बार भी बेटी का जन्म लेना है, वहां नन्नीबेन की पीडा के मूलमें आर्थिक अभावग्रस्तता की विषम स्थितियाँ हैं , जिनके कारण उसके प्रथम पुत्र की मृत्यू हो जाती है। दोनों ही स्त्रियों के ह्दय में व्याप्त गहरे दु:ख की अनुभूति ग्रामसेविका शारदाबेन को होती है। वह सहानुभूति और ममत्व की इसी मानसिकता में लल्लीबेन की नवजात पुत्री की पालन-पोषण की व्यवस्था करने का संकल्प करती प्रतीत होती है।

2.2.2.2 करार :-

'करार' कहानी भारतीय समाज में रूढ धार्मिक विश्वास की स्थितियों का अंकन करती है। एक अमरीकन लडकी चैरी जोधपुर में युनीसेफ की तरफ से आयोजित पारम्पारिक जल - संचय व्यवस्था पर प्रोजेक्ट कर रही थी और उसी सिलसिले में हिंदुस्थान आयी थी। उसके दादा चीन से भागकर अमरीका आये थे और वहाँ के नागरिक बन गए थे। यहाँ पर आने के बाद चैरी यहाँ का रहन-सहन अपनाती है सलवार-कमीज पहनती है।

भारत के लोगों का आदर-सत्कार देखने के लिए वह रेगिस्तान के गाँवो की सैर करना चाहती है। इसलिए चैरी और लेखिका बीच रास्ते में ही बस से उतरती है। थोडा चलने के बाद थककर दोनों थोडी देर विश्राम करने के लिए बैठ जाती हैं, तभी एक जनसमुह उनकी तरफ आता हुआ दिखाई देता है। उन दोनों को वहाँ के पाबूजी के मंदिर में विश्राम करने के लिए आमंत्रित करते हैं। वहाँ पहुँचने के बाद सब लोग दर्शन लेते हैं , फिर पानी के कुएँ की तरफ बढते हैं। बाकी सारे कुएँ सूख चुके हैं, लेकिन इसी एक कुएँ में पानी हैं। वहाँ के लोगों का यह धार्मिक विश्वास हैं कि यह पाबूजी का ओरण है, इसलिए इस कुएँ मे पानी है। खेजड़ी के पेड़ को लोग दैवी वृक्ष मानते हैं, जो खुद-ब-खुद उगता है। खेजडी का पेड न उखाडा जाता है, न उगाया। इसलिए इन पेडों को काँटने की हिम्मत कोई नहीं करता। लोग चैरी को बताते हैं, "पिछले साल एक स रकारी

अफसर आया था, जमीन की नाप-जोख करने। मन में वृक्ष काटने का पाप होगा, ओरण में प्रवेश करते ही चकरघिन्नी खाकर जो गिरा, तीन महीने तक चल-फिर नहीं पाया। तब से कोई नहीं फटका। यह पाबूजी की संपत्ति है।"[26]

रात को दोनों वहीं पर सो जाती हैं। दूर ओरण की सरहद पर एक हराभरा, चौड़ा, खेजड़ी का पेड़ दिखायी दे रहा था, जो रात को उस जगह नहीं था। यह देखकर दोनों आश्चर्य चकित हो जाती हैं। यह सब देखकर चैरी वापस अपने देश अमरीका नहीं जाना चाहती। भारत में रहकर वह यहाँ के रीति-रिवाज, धर्म, परंपरा, तथा धार्मिक विश्वास को अपनाना चाहती है।

2.2.2.3 अक्स :-

प्रस्तुत कहानी आत्मकथनात्मक शैली में लिखी कहानी है। कहानी की नायिका एक युवक से प्रेम करती है। नायिका के मन में पेरिस के एक युवक की तस्वीर समा गयी है और वह पिछले कई वर्षों से उसी के प्रति प्रणय-भाव से प्रभावित रही है, किन्तु अंत में इस प्रणय-भाव की परिणती निराशा में होती है।

नायिका नायक से मिलने यूरोप जाना चाहती है। लेकिन दस पन्द्रह साल पैसे जुटाने में बीत जाते हैं। इस बीच उसके माँ-पिताजी दोनों स्वर्ग सिधार जाते हैं, और भाई-भाभी उससे मुँह फेर लेते हैं। अकेली पेट काटकर कितना पैसा बचाती ? सब लोग कहते हैं, उसने अपनी जिंदगी तबाह कर ली है, क्योंकि शादी नहीं की। वह एक हिदुस्थानी औरत है। बहुत से लोग उसे देखने आ जाते हैं, लेकिन उनमे वह अपने प्रेमी को ढूँढने की कोशिश करती है।

दस-पन्द्रह साल बाद आज वह यूरोप जाकर अपने प्रेमी के होने के खामखयाल जकड़ से आजाद हो जाना चाहती है। अगर वह नहीं मिला तो, एक दुनियादार आदमी को पकडकर उससे शादी करना चाहती है, और बाकी जिंदगी बसर करना चाहती है। वह कहती है - "दिन में लौंग-जीरे का बघार देकर दाल बनाऊँगी, रात को आलू-मेथी की सब्जी। ..... महीने की पहली तारीख को रूपये गिनूँगी और बाकी तीस दिन खर्च का हिसाब रखूँगी। और-और मातृसुख भोगूँगी। दो या तीन बच्चे पैदा करके उन्हें पालूँगी, उनके सुख को अपना सुख मानूँगी, उनके दुःख से दुःखी होऊँगी और मरते वक्त अपना कपडा-जेवर बहू-बेटी को बाँट सकने का सन्तोष पाऊँगी।" [27]

यूरोप के कई शहरों में वह उसे ढूँढने की कोशिश करती हैं, लेकिन हार जाती है। वह अपने प्रेमी को नही पा सकती। तब उसका भ्रम टूट जाता है। प्रस्तुत कहानी की विशेषता नायिका के मनोभावों की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति में देखने को मिलती है।

2.2.2.4 अनाडी :-

'अनाडी' में बारह वर्षीय अनाडी कामकाजी लडकी सुवर्णा की कहानी है। सुवर्णा आठ बरस की

थी, तब से अपनी माँ के साथ बर्तन माँजने का काम करती है। उसके बप्पा का फैक्टरी का काम छूट जाने के बाद उसकी माँ तीन छोडकर पाँच घर में झाडू-फटका करने लगती है। सुवर्णा को भी लगता था, कि वह भी स्कूल जाए, साथ के लडके-लडकियों के साथ खेले, झूला झूले, बिस्कुट-दूध खाए, लेकिन यह सब उसके नसीब में नहीं था।

सुवर्णा की मालकिन मराठी नहीं जानती है। मालिक को जब पता चलता है, कि सुवर्णा के बप्पा का काम छूटने के कारण उसे काम करना पडता है, तब वह कहता है, "सब युनियनवालों की कारस्तानी है। इतना ते सोचें कि काम है तो सब कुछ है। उन्हे तो अपना उल्लु सीधा करना है। कहीं हडताल करवाएँगे कहीं कुछ। उन्हें तो लीडरी चलानी हुई, भुगतें-मरें गरीब मजदूर। अब हो गयी न घुँटनी।" [28]

सुवर्णा बहुत होशियार है। बडे लोगोंका मन कब पलट जाए पता नहीं, इसलिए उनसे जो भी मिलता है सुवर्णा फौरन ले लेती है। लेकिन उनका 'बेचारी' कहना सुवर्णा को अच्छा नही लगता है। सुवर्णा की मालकिन को साज-सिंगार करना बहुत अच्छा लगता है। सुवर्णा को भी बडे लोगों की तरह साज-सिंगार करना अच्छा लगता है। कभी-कभी अपनी मालकिन से वह अपने नाखून रंगवा लेती है।

बडे अफसरों की तरह सुवर्णा को भी लगता है कि उसे भी इतवार को छुट्टी मिल जाय। लेकिन इतवार को सेठ लोग घरपर होते हैं, इसलिए उसे छुट्टी नहीं मिलती। एक दिन सुवर्णा इतवार को कामपर नहीं जाती, तो उसकी माँ खुब पिटायी करती है। सुवर्णा को लगता है , उसकी मालकिन के साथ कैसा भी बर्ताव चलेगा। अपनी समृद्ध मालकिन के आलसी स्वभाव को परखकर अधिक लाभ उठानेका प्रयत्न करती है और इसी मानसिकता में जब वह एक दिन ड्राइंग रूम में सौफे पर बैठकर उन्मुक्त भावसे बिस्कुट खाने लगती है तब मालकिन उसके साहस पर क्रुध्द होकर उसे अपने घर की नौकरी से ही निकाल देती है। प्रस्तुत कहानी में लेखिकाने समाज में व्याप्त वर्ग-वैषम्य की तीव्रता को बडी सूक्ष्म एवं सांकेतिक अभिव्यंजना दी है।

2.2.2.5 चकरघिन्नी :-

प्रस्तुत कहानी की नायिका विनीता है। उसके माता पिता दोनों भी डॉक्टर है। अपनी माँ लेखा की व्यस्तता को देखकर बचपन में ही उसके मन में यह धारणा बैठ गयी है कि उसकी माँ एक आदर्श पत्नी नहीं है, साथ ही आदर्श माँ भी नही है। विनीता के पिता अपने डॉक्टर पत्नी की घर के कामकाजों में मदद करतें थे, दोनों का साहचर्य मैत्री के स्तर का था। "वे विनीता की देखभाल अच्छी तरह कर सकते थे। वे घर से ही अपना दवाखाना चलाते थे। इसलिए माँ को दिल्ली शहर के नामी, पन्त अस्पताल में, चीफ की ड्यूटी निभाने जाते हुए यह नहीं सोचना पडता था कि विनीता को किसके जिम्मे छोडें।" [29] इस तरह विनीता की सारी देखभाल उसके पिता ही करते थे। इस मानसिकता की प्रतिक्रिया उसपर इस रूपमें होती है कि वह प्रतिभा संपन्न होते हुए भी केवल अपनी माँ की इच्छा के विरोध स्वरूप ही डाक्टरी की पढाई नंही करती,

सामान्य रूप से बी.ए. की पढाई समाप्त करने के बाद विवाह कर लेती है।

विनीता के पति का नाम अमित गोयल था। वह सेन्ट्रल बैंक में मॅनेजर था। विनीता पती सेवा में रत रहते हुए अपने को आदर्श गृहिणी मानने लगती है। अपने दाम्पत्य जीवन में उसका पति सिर्फ उसका अपना है, इसमें ही धन्यता मानती है। इसलिए वह सोचती है, "शादी के बाद, विनीता जब बैंक के लॉकर में अपना जेवर रखने गया तो उसे यह सोचकर बहुत सुकून मिला कि उसका पति ठीक उस लॉकर की तरह था, भरोसेमन्द और अपने हदों में चकबन्द।"[30] विनीता को पुत्र अजय और पुत्री माया दो संताने हैं। बच्चों की सेहत के प्रति वह सजग माँ थी। बढती उम्र के बच्चों के लिए पौष्टिक आहार बनाना, उन्हे स्कूल के लिए तैयार करना, उनकी सेहत का खयाल रखना, बच्चों के स्कूल से लौटने पर जमकर पढाना आदि बातों पर विनीता अपना अधिकतर समय बिताती है, ताकि वह आदर्श माँ बन सके। पुत्र अजय और पुत्री माया के बडे होनेपर उसकी गृहिणी के रूपमें अपने प्रति एक प्रकार की व्यर्थता का भाव जगता है। माया और अजय चाहते हैं कि, उनकी माँ जॉब करे। उसका हर वक्त घर पर रहना उन्हे अच्छा नहीं लगता। विनीता अपने जीवन की इस रिक्तता को दूर करनेके लिए अपने पापा के क्लिनिक मे रिसेप्शनिस्ट के रूप में कार्य करने का निर्णय ले लेती है। उसका पति अमित भी यही चाहता है।

प्रस्तुत कहानी में लेखिका ने नायिका विनीता की पीडा को कुछ अलग ढंग से प्रस्तुत किया है। साथ ही बेटी द्वारा माता-पिता के सौहार्दपूर्ण जीवन को चित्रित किया है।

2.2.2.6 बाहरी जन :-

नंदिनी एक मध्यवर्गीय परिवार में पैदा हुई लडकी है। राजेश्वर और सरिता के बेटे नितीन से उसका विवाह हो जाता है। नितीन अमीर घर का इकलौता बेटा था। वह देश की प्रगति और विकास योजना को अंजाम देने के लिए एक लघु उद्योग स्थापित करने के सिलसिले में बाहर गया है। दोनों के विवाह को सात साल हो गए हैं, लेकिन अब तक उन्हें संतान नहीं हुई है।

नंदिनी के ससुर चाहते हैं कि, नंदिनी को जल्द से जल्द संतान हो। इसलिए ही "इकलौते बेटे के लिए मामूली घर की लडकी ली थी ते यह सोचकर कि सुंदर है और पाँच भाई-बहनों मे एक। घर सुन्दर पोते - पोतियों से भर जाएगा।"[31] नंदिनी डाक्टर के पास जाकर जाँच करवा लेती है। उन्होने कहा है, प्रकृति को अपना काम करने दो। एक साल और इंतजार करो। टेन्शन मत रखो। रिलॅक्स करना सीखो। लेकिन राजेश्वर अब बच्चे के लिए और इंतजार नहीं करना चाहते हैं। इसलिए वह नंदिनी पर आपरेशन करा लेने के लिए दबाव डाल रहे है, उसकी सास सरिता भी उनकी इस धारणा का समर्थन करती है। किन्तु नंदिनी बच्चे के जन्म के लिए चिकित्सा के जरिए अप्राकृतिक प्रक्रिया का इस्तेमाल करने के पक्ष में नहीं है। ऐसी स्थिती में वह अपने को विवश नहीं मानना चाहती।

नंदिनी के जीवन की संतानहीनता की विडंबना को प्रस्तुत कहानी में मृदुला गर्ग ने चित्रित किया है।

2.2.2.7 वह मैं ही थी :-

उमा एक पढ़ी लिखी लड़की है। शादी से पहले वह कॉलेज में अर्थशास्त्र पढ़ाती थी। उसके माता-पिता तथा दो छोटी बहनें दिल्ली में रहते थे। लेकिन उमा की जब शादी हो जाती है, तब अपनी नौकरी छोडकर अपने पति मनीश के साथ रहने लगती है। कुछ ही दिनों के बाद मनीश का तबादला एक छोटे से कस्बे में होता है। उमा तथा उसकी सास दोनों मनीश के साथ उस कस्बे में रहने लगते हैं। उमा उस वक्त गर्भवती थी। लेकिन उस कस्बे में चिकित्सा सुविधाओं के अभाव के कारण अपने आगामी प्रस्ताव को लेकर उसे दुश्चिन्ताएं घेरने लगती हैं।

उमा जिस कमरें में रहती थी, पहले एक औरत कमरे के उसी पलँग पर बच्चा पैदा करते मर गयी थी, जिस पर आज-कल उमा को लेटना पडता है। मनीश का नया-नया तबादला उस कस्बे में हुआ था, इसलिए कारखाने में काम करनेवाले सभी अफसरों और बाबुओं की बीवियाँ एक-एक करके उससे मिलने आ चुकी थीं। सबकी जबान पर छह महीने पहले मरी औरत की कहानी थी, जिसे अपनी-अपनी शैली में वे उसे सुना जाती थीं। क्लर्क की बीवी होती ता त्रस्त आँखों से कहती, "आपने यह घर कैसे ले लिया, छह महीने से खाली पडा था, कोई यहाँ आने को तैयार नहीं था। उस औरत का भूत .... आप भी गर्भवती हैं। बच्चा जनने अपनी माँ के पास क्यों नही चली जाती।" [32]

उमा के माँ-बाप और छोटी बहनें संवेदनहीन नहीं है। वह तो उनकी महानगरीय दृष्टी है, जो उन्हें बिहार के इस कस्बे की वास्तविकता देखने नहीं देती। उमा के दिल्ली जाने से उनकी व्यस्त सामाजिक जिन्दगी की रफ्तार में अड़चन आ जाती। माँ-बाप की सहानुभूति भी अपने माहौल के प्रति थी। उमा उन्हें दोष नहीं देती। उमा फिर सोचती है, पटना चली जाए। दस-पन्द्रह दिन किसी होटल में रहे और दर्द शुरू होने पर अस्पताल में भर्ती हो जाए। लेकिन उसके पास पैसे नहीं थे और मनीश के पास भी इतना पैसा नहीं था कि उसे हफ्ते-दो हफ्ते सस्ते-से-सस्ते होटल में भी ठहरवा सके।

एक दिन उमा प्रसव वेदना से तडपने लगती है। तब उसे कस्बे की एक दाई को मनीश बुला लाता है। उमा एक लड़की को जन्म देती है। लेकिन जब खून गिरना बन्द नही होता, तब दाई किसी डॉक्टर को बुलाने की सलाह देकर अपना काम खत्म करके चली जाती है। प्रसव के इसी क्रम में उमा की मृत्यु हो जाती है।

प्रस्तुत कहानी में जहाँ एक ओर उमा के मन की भावनाओं एवं अनुभूतियों के माध्यमसे वर्तमान युगीन परिवेश में नारी विवशताओं को उभारा गया है, वही दूसरी ओर उसकी नवजात बच्ची के माध्यम से नारी जीवन की कमनीयता, शालीनता और सार्थकता का समर्थन भी किया गया है।

2.2.2.8 रेशम : -

'रेशम' एक अधेड उम्र की स्त्री हेमवती के जीवन की कहानी है। हेमवती को दो बेटे हैं, दोनों का विवाह हो चुका है। बडा लडका रामू की पत्नी तारा, तथा राजू की पत्नी प्रीती एक वकील की लड़की थी। हेमवती को अपने पति द्वारा लगाए गए नियंत्रणों एवं अंकुशों के कारण अपने बेटों और बहुओं के सामने सदा अपमानित होना पडता है। लेकिन हेमवती कभी भी इस बात की शिकायत नहीं करती। अपने पति के हर जुल्म को वह चुपचाप सह लेती है।

हेमवती के पति ने दक्षिण दिल्ली जैसे महँगे इलाके में एक छोटा-सा मकान बनाया था। उनके दोनों बेटें अच्छा कमा-खा रहे हैं। बढिया पहन-ओढ रहे हैं। बल्कि खाते कम, पहनते ज्यादा हैं। कहना चाहिए अच्छा कमा-लुटा रहे हैं, मजा लूटते हैं, पैसा लुटाते हैं। अपने बेटों की ऐसी हरकतों को देखकर उनके पिता बहुत गुस्सा होते हैं, "लुटाने के लिए कमाते हैं उल्लू के पठ्ठे। यह नहीं कि कुछ जमीन-जायदाद का जुगाड़ करें। देख लेना तुम, दोनों मिलकर भी अपने बच्चों के लिए एक मकान नहीं बना पाएँगे।" [33]

जब नन्हें राजू के लिए एक बार हेमवती अपने पास के पैसों से बल्ला खरीद लेती है, तब से बाबूजी ने उन्हें एकमुश्त घर का खर्च देना बन्द कर दिया था। आज भी वह रोज सुबह हिसाब लगाकर दिनभर के खर्च को पैसे पकडाते थे और शाम को उनसे पूरा हिसाब तलब कर लेते थे। हर सुबह हाथ फैलाकर दस-बीस रूपये लेने में हेमवती भिखारिन-सा महसूस करती थीं। उसकी बहू तारा और प्रीती को भी अपनी सास का इस तरह अपमानित होना अच्छा नहीं लगता था। प्रीती तो चाहती है कि बाबूजी के मकान के कानूनन तीन हिस्से होने चाहिए। बाबूजी के जीते-जी उनकी सुरक्षा के लिए मकान में अस्थायी हक की माँग करती रही थी। उसके बार-बार कहनेपर बाबूजी ने वसीयत में उनके लिए ऐसा इन्तजाम कर दिया था, जिससे जीते-जी लडके उन्हें मकान से नहीं निकाल सकते थे, भले वे अपनी इच्छासे उन्हें या उनके बच्चों को बेदखल नहीं कर सकती थीं।

तारा भी अपने पति राजू को हेमवती के कमरे में कूलर लाकर लगाने के लिए कहती है। लेकिन यह देखकर बाबूजी कहते है, "ऐसा करो, अपनी सास को लाली-पाउडर लगाना भी सिखा दो। कूलर लगा है तो मेकअप भी होना चाहिए। पसीना आने पर बह नहीं जाएगा।" [34] इस तरह हर बार हेमवती को बेटे और बहुओं के सामने अपमानित करते ही रहते हैं।

एक दिन हेमवती के पति की मृत्यु हो जाती है और उसी क्रम में शोक-प्रदर्शन 'उठावनी' के निमित्त उपस्थित स्त्रियों के समूह को देखकर उसे यह अनुभव होता है कि किसी भी स्त्री के चेहरेपर दुःख और सहानुभूति का कोई चिह्न नहीं है। वह उनकी परेशानियों को दूर करने के लिए 'उठावनी' के कार्यक्रम की समाप्ति की घोषणा कर देती है और सबको चाय पीकर ही जाने के लिए कहती है। उसके इस व्यवहार से वहां बैठी हुई सभी औरतों के चेहरेपर की ऊब समाप्त हो जाती है। वस्तुतः हेमवती के इस निर्णय को नारी व्यक्तित्वपर लगाए गये

अंकुश के विरूध्द विद्रोह भाव का ही द्योतक माना जा सकता है।

प्रस्तुत कहानीं में नारी व्यक्तित्व से दमन और विद्रोह दोनों ही भावों की अभिव्यक्ति एक साथ हुई है। इस कहानी में अधेड उम्र हेमवती के जीवन की विवश स्थितियों का अंकन मनोवैज्ञानिक रूप में किया है।

2.2.2.9 संगत :-

प्रस्तुत कहानी नायकप्रधान है। कहानी का नायक एक चित्रकार है। वह एक चित्रकार औरत से प्रेम करता है। उसे लगता है वह एक कलाकार है, इसलिए वह आजाद रहना पसंद करता है। वह नौकरी करने से इनकार कर देता है। क्योंकि वह वक्त का गुलाम बनकर नहीं जीना चाहता। उसे अपनी आजादी बहुत प्यारी है। वह किसी के इशारों पर नहीं नाचना चाहता। इसलिए वह नौ और पाँच के बीच अपने को बंदी नहीं बनाना चाहता।

वह अपना सारा समय खाली रखना चाहता है, ताकि वक्त-बेवक्त वह जब भी बुलाए वह उसके पास जा सके। वह खुद खाली रहकर ऐसे हालात पैदा करता रहता है कि उससे कहे और वह बुलाने से इनकार न कर सके। सुबह श्याम वह अपने परिवार के साथ व्यस्त रहती है। लेकिन नायक का परिवार जी रहा मर-मरकर और वह चन्द लम्हा जी लेने के लिए वक्त के रेगिस्तान में औंधा पड़ा इंतजार कर रहा है। वह अपाहिज की तरह उसके दो शब्दों-आ जाओ-की बैसाखी पर खडा है, और उसकी कीमत उसका परिवार अदा कर रहा है।

उसे लगता है कि वह उससे पूछ ले कि आज तक उसका चित्र क्यों नहीं बनाया ? वह उसके पुरूषी भूख के बारे में पूछ ले। जब तक वह उसे पुरूष नहीं समझेगी, तब तक वह उसके शारीरिक सौंदर्य का अमूर्त चित्र नहीं बना पाएगा। इसलिए वहा कहता है, "प्रेम की बात मैं नहीं करता, पर एक स्त्री जो मेरे लिए अमूर्त सौन्दर्य का रूप है, मूर्त होकर मेरे पास आए, मुझे पुरूष समझे और ..... ज्यादा मैं कुछ नहीं चाहता। बस, एक बार तुम्हारी गोदी में सिर रख दूँ और देर तक ...।" [35] वह चाहता है अपनी पुरूषी भूख उससे मिटा ले। लेकिन अपनी इस इच्छा को वह अंत तक अपने मन में ही रखता है।

2.2.2.10 विलोम :-

'विलोम' कहानी आत्मकथानात्मक शैली में लिखी कहानी है। कहानी की नायिका एक युवक से प्रेम करती है। लेकिन उसका साथ देकर वह अपने प्रेम को नहीं पा सकती है। नायिका अपनी कंपनी की विक्री-शाखाओं की कान्फ्रेन्स के लिए जब सोलह साल बाद बंबई आ जाती है, तब उसे अपने प्रेमी के साथ बंबई मे बिताया हर पल याद आ जाता है। जिस आदमी के लिए उसे शहर दीखना बन्द हो गया था, आज बहुत कोशिश के बाद उसका चेहरा तक उसे याद नहीं आता।

नायिका का प्रेमी बिहार के दुमका जिले में किसी गाँव में रहकर काम करना चाहता है। बँधुआ

मजदूरोंके साथ रहकर उनकी समस्याओं को समझने के लिए, उन्हें उनका हक दिलाने के लिए मदद करने के लिए वह जाना चाहता है। वह कहता है, "वादी-प्रतिवादी मै नहीं जानता। तुम्हारे लिए इतना ही काफी है कि मैं उन इन्सानों की मदद करना चाहता हूँ, जिन्हे हम लोग इन्सान का दर्जा देने से इनकार करते आये हैं।" [36] वह नायिका के साथ चलने के लिए कहता है। उसे इतना प्यार आ रहा था उस पर कि लगता है, उसके लिए कुछ भी कर सकती है। लेकिन कुछ नहीं करती। वह उससे प्यार तो करती है, लेकिन विश्वास नहीं करती। वह उसे छोड एक दिन बिहार के दुमका जिले चला जाता है।

एक साल बाद कोई उसे बताता है कि उसके नाम के एक आदमी को हमारी सरकार ने बिहार के किसी इलाके से गिरफ्तार किया है। वह सोचती है कोई दूसरा आदमी होगा। फिर पाँच साल बाद अखबार में पढती है कि उसके नाम के एक आदमी को रिहा कर दिया गया है, पर पुलिस के पहरे में देश छोडकर जाने पर मजबूर किया गया है।

इस तरह प्रस्तुत कहानी विषय-वस्तु की दृष्टी से एक प्रेम कहानी ही है, जिसमें नायक के प्रति नायिका के अनुराग और आकर्षण को उभारा गया है।

2.22.11 शहर के नाम :-

प्रस्तुत कहानी में एक ऐसी लडकी का वर्णन है जो 1975-76 के आपातकाल में राजनीतिक गतिविधियों से जुड़ जाती है। उसके पिता सरकारी अफसर हैं। अपनी इज्जत तथा प्रतिष्ठा के लिए वह अपनी बेटी को शहर के सबसे बढ़िया कॉलेज में पढ़ने भेजते हैं। लेकिन वह मन लगाकर पढ़ने के बजाय राजनीति के गंदे दलदल में फँस जाती है। अगर इस बीच पुलिस उसे पकड़कर ले जाती तो उसके पिता को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता। सारे शहर में वह बेआबरु हो जाते। अपनी बेटी का मजदूरों की झुग्गी -झोंपड़ी बस्तियों में, गली-गली जाकर नाटक करना उन्हें अच्छा नहीं लगता। अतः वह उसे एम.एस. की पढ़ाई के लिए अमरिका भेज देते हैं।

अमरिका जाकर भी वह अपनी पढ़ाई के प्रति समर्पित नहीं रहती और वहाँ के सामाजिक जीवन से जुड़ जाती है। वहां रहकर भी पढ़ाई की अपेक्षा शादी, बच्चे, दोस्त इनके बारे में ही सोचती रहती है। अपने एक मित्र हैरी से वह शादी की बात भी कर लेती है। उसने हिंदुस्थान के बारे में इतनी किताबें पढ रखी थी कि हर मुद्दे पर उससे ज्यादा जानकारी हासिल कर ली थी। उसकी अन्तहीन जिज्ञासा और तेजी उसे अच्छी लगती है, इसलिए उस पर उसे प्यार आ जाता था। हैरी खुद आकर उसका खत लौटा देता है, और कहता है, "बहुत भोली है तुम, उसने कहा था, इतनी खुली-खुली चिट्ठी भला कोई लड़की लिखती है। कोई देख लेता तो क्या सोचता। प्रपोज लड़के करते हैं, लड़कियाँ नहीं।"[37]

हैरी के इनकार के बाद वह अपने देश लौटना चाहती है। सब दोस्तों से कह देती है। पिता को भी खत

लिख देती है, कि फौरन टिकट के पैसे भेज दे, क्योंकि वह अपने देश, शहर वापस लौट रही है। लेकिन उसके पिता उसे पैसे भेजना ही बंद कर देते हैं। कॉलेज की फीस कॉलेज में ही भेजते हैं। उन्हें लगता है कि पैसे न भेजने से वह वापस आने के बजाय पढाई में ध्यान लगा देगी। वह पिता की इच्छा के विरूध्द अपनी पढाई अधूरी छोड़कर अपने देश लौटती है। काम करके वह टिकट के पैसों का इंतजाम कर लेती है।

शाम के धुंधलके में अपने घर न जाकर एक होटल में रुक जाती है। जहाँ का परिवेश उसके मन में आपातकाल की बहुतसी स्मृतियां जगा देती है। वह दुर्बल और लाचार लोगोंको सहयोग देने के लिए अपनी स्वतंत्रता बनाये रखना चाहती है और इसी मानसिकता के कारण अपने पिता को अंतिम पत्र लिख देती है।

प्रस्तुत कहानी नारी-व्यक्तित्व की विद्रोह -वृत्ति की दृष्टिसे बहुत ही सशक्त और प्रभावी रचना है। स्वातंत्र्य चेतना को ही प्रमुखता प्रदान करने के कारण कहानी की मूल संवेदना उभर आती है।

निष्कर्ष :-

मृदुला गर्ग का साठोत्तर महिला कहानीकारों में महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनका समग्र साहित्य नारी विमर्श पर आधारित है। अतः हर कहानी में नारी जीवन की समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। उनकी अधिकांश कहानियाँ नायिकाप्रधान हैं, लेकिन कुछ ऐसी कहानियाँ है जिनमें पुरूष पात्र को प्रधानता दी गयी है। मृदुला गर्ग के 'ग्लेशियर से' कहानीसंग्रह में कुल मिलाकर सोलह कहानियाँ संकलित हैं। हर कहानी में कहानी के तत्वों का समान रूप से निर्वाह किया गया है। कहानी का प्रथम तत्व कथावस्तु सभी तत्वों में अधिक महत्त्वपूर्ण है। अतः मृदुला गर्ग की हर कहानी की कथावस्तु बडी ही रोचक है। प्रत्येक कहानी की कथावस्तु में किसी -ना-किसी नारी समस्या को स्थान दिया गया है। कथानक कहानी की नायिका से शुरू होकर नायिका पर ही खत्म होता है। प्रस्तुत कहानीसंग्रह की 'ग्लेशियर से' , 'झूलती कुर्सी', 'तुक', 'खरीदार', 'होना', 'खाली', 'अदृश्य' आदी कहानियाँ नारी प्रधान हैं। प्रस्तुत कहानियों में नारी जीवन से संबंधित समस्याओं की विस्तृत कथावस्तु का गठन किया है। लेकिन 'प्रतिध्वनि', 'संज्ञा', 'सार्त्र कहता है', 'अन्धकूप मे चिराग' आदि कहानियों की कथावस्तु में परिवारिक संवेंदनाओं का कम तथा व्यक्तिगत भावनाओं का अधिक चित्रण हुआ है। 'टोपी', 'उलटी धारा' तथा 'गूँगा कवि' आदि नायकप्रधान कहानियाँ हैं।

मृदुला गर्ग के 'शहर के नाम' कहानीसंग्रह में कुल मिलाकर ग्यारह कहानियाँ संकलित हैं। इसकी 'करार' 'अक्स', 'संगत', 'विलोम', 'शहर के नाम' आदि कहानियाँ आत्मकथनात्मक शैली में लिखी हुई कहानियाँ हैं। इस कहानीसंग्रह की कहानियों में नारी जीवन के अलग-अलग रूपोंका अंकन किया गया है। 'तीन किलो की छोरी', 'अनाडी' आदि कहानियों की कथावस्तु के माध्यम से निम्नवर्गीय परिवेश की स्त्रियों की दयनीय जीवन स्थितियों का अंकन किया गया है। 'चक्करघिन्नी', 'वह मै ही थी', 'बाहरी जन'

आदि कहानियों की कथावस्तु उच्च वर्गीय स्त्रियों की विविध समस्याओं का चित्रण प्रस्तुत करती हैं।

वस्तुतः 'शहर के नाम' की कहानियां इस रूप में महत्त्वपूर्ण मानी जा सकती हैं कि इनके माध्यम से कथा-लेखिकाने वर्तमान परिवेश में नारी-चेतना की विविध प्रवृत्तियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने का प्रयास किया है। इन कहानियों में नारी-व्यक्तित्व के अभाव, तनाव, संघर्ष और प्रेम जैसे मनोभावों की मनोरम व्यंजना हुई है। कहानियों की भाषा-संरचना में भी कथ्य के अनुरूप ही सरसता और सबलता के गुण समाहित हैं।

संक्षेप में मृदुला गर्ग की 'ग्लेशियर से', और 'शहर के नाम' कहानीसंग्रह की कहानियाँ कहानी के कथावस्तु तत्व की दृष्टी से सफल बन पड़ी हैं।

संदर्भ सूची

1. उपेंद्रनाथ अश्क : हिदी कहानी : एक अंतरंग परिचय, पृ.23
2. डॉ.सरजूप्रसाद मिश्र, हिंदी कहानी के आधारस्तंभ, पृ.7
3. डॉ.परमानंद श्रीवास्तव, कहानी की रचना प्रक्रिया, पृ.69
4. मोहनलाल जिज्ञासू, कहानी और कहानीकार, पृ.22
5. डॉ.प्रतापनारायण टंडन, हिंदी कहानी कला, पृ.258
6. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, हिंदी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ. 265-266
7. मृदुला गर्ग, ग्लेशियरसे, पृ.11
8. वही, पृ. 18
9. वही, पृ. 20
10. वही, पृ. 27
11. वही, पृ. 39
12. वही, पृ. 40
13. वही, पृ. 57
14. वही, पृ. 67
15. वही, पृ. 75
16. वही, पृ. 84
17. वही, पृ. 103
18. वही, पृ. 126
19. वही, पृ. 127
20. मृदुला गर्ग, ग्लेशियरसे, पृ. 136
21. वही, पृ.150
22. वही, पृ. 158
23. वही, पृ. 162
24. डॉ.बिपिनबिहारी ठाकुर, प्रकर,मार्च 92 , पृ.35
25. मृदुला गर्ग, शहर के नाम, पृ. 20
26. वही, पृ. 32
27. वही, पृ. 38-39

28. वही, पृ. 45
29. वही, पृ. 50
30. वही, पृ. 55
31. वही, पृ. 62
32. वही, पृ. 69
33. वही, पृ. 77
34. वही, पृ. 83
35. वही, पृ. 88
36. वही, पृ. 95
37. वही, पृ. 100